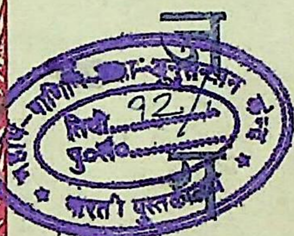
काशीशास्त्रार्थ

वि





यत्र योगेश्वरः कृष्णः
यत्र पार्थो धनुर्धरः।
तत्र श्रीर्विजयो भूतिर्
ध्रुवा नीतिर्मतिर्मम ॥

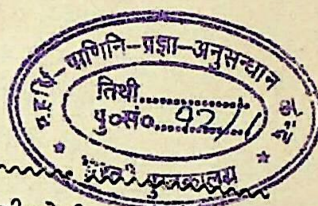
माधव पुस्तकालय
१०३, A



वर्ष ६

काशी शास्त्रार्थ विजय

❖



मुफ्त की राड़ न रिन्दों से निकाली होती,
पहिले दस्तारे फजीहत तो संभाली होती।
साफ स्वीकार कि तमहीद न डाली होती,
उज्र ही करके कोई बात बनाली होती॥

❖

सम्पादक—

श्रीकण्ठ शास्त्री व्याकरणाचार्य
(एम० ए० एम० ओ० एल०)



❖

प्रकाशक—

माधव पुस्तकालय
103-ए० कमला नगर

शास्त्रार्थ की पृष्ठ भूमि

इस वर्ष तैयारी तो हो रही थीं 'लोकालोक' पत्र का वेदाङ्क निकालने की, परन्तु दयानन्दियों ने शास्त्रार्थ-शताब्दी का हल्ला मचाकर हमें धर्म संरक्षण की ओर उन्मुख कर दिया। परिणाम स्वरूप काशी में सनातन धर्म विजयोत्सव का अपूर्व समारोह सम्पन्न हुआ। श्री स० ध० दिग्विजय मण्डल की ओर से शास्त्रार्थ घोंषणाकी गई थी वह फलवती हुई और विरोधियों को पराजित होकर अपनी करनी पर पश्चात्ताप करने को विवश होना पड़ा।

एक शताब्दी पूर्व काशी में दयानन्दजी की जो करारी हार हुई थी उसे कोई जानता था और कोई नहीं जानता था। आर्यसमाजी तत्कालीन वास्तविक शास्त्रार्थ के मिथ्यारूप में प्रकाशित विवरण को पढ़कर मन ही मन खुश हो लेते थे और अपने अहम् को आप्यायित कर लेते थे परन्तु श्री विश्वनाथ भगवान् ने दयानन्दी समाज के नेताओं की बुद्धि में ऐसा विभ्रम आरूढ़ कर दिया कि वे अपने विनाश का स्वयं जाल तनने में संलग्न हो गए।

यह नग्न सत्य है कि इस काशी शास्त्रार्थ-काण्ड से पूर्व कलिकालुषित बुद्धि वाले कथित सुधारक आर्य-समाज के मन्तव्यों को सामयिक-आवश्यकता पूर्ति के लिए एक सीमा तक उपयुक्त मानने लगे थे, उसके वैदिक होने का भी मिथ्या भ्रम उनके मस्तिष्क में घर कर रहा था परन्तु दिग्विजय के नाम पर आर्योपदेशकों की जो चर्चित यात्रा हुई प्रथम तो उसमें ही यत्रतत्र-सर्वत्र मुंह की खानी पड़ी फिर रही सही पोल काशी में चौड़े आ गई।

उक्त पुस्तक में सौ वर्ष पूर्व हुये दयानन्द के शास्त्रार्थ की प्रतिक्रिया सामग्री मुख्य रूप से प्रस्तुत की गई है। तथा च साम्प्रतिक दयानन्दी हलचल और उसके फलाफल से सम्बन्ध रखने वाले विवरण के साथ साथ आर्योपदेशकों से आमने सामने हुई तीन घटनाओं का विशुद्ध विवरण है। प्रथम टक्कर अन्यून तीन घन्टे तक चालू रही। जिसमें दो आर्योपदेशक चारों शाने चित्त हुवे, म० रुद्रदत्त तो अन्त में मूर्ति में भगवान् होने की स्वयं घोषणा करके बुरी तरह पराजित हुये।

दूसरी टक्कर में शास्त्रार्थपञ्चानन श्री प्रेमाचार्य शास्त्री शास्त्रार्थ करने आर्यसमाज के मंच पर पहुँचे, परन्तु दयानन्दी समायाभाव का वहाना करके शास्त्रार्थ से भाग गए, केवल पांच मिनट का समय प्रदान किया गया।

पञ्चानन जी ने इतने स्वल्प समय में ही वज्र-सन्निभ प्रश्न करके महाशयों को पोल खोल कर रख दी। म० ॐ प्रकाश यथेच्छ समय तक आँय बांय करते रहे परन्तु किसी एक भी प्रश्न का माकूल उत्तर न दे सके। वस्तुतः इन पुरस्कृत प्रश्नों का उत्तर आर्यसमाज के पास है ही नहीं। इस प्रकार इस स्वल्प कालीन वादानुवाद का वड़ा स्थायी प्रभाव पड़ा। जनता 'स्थाली पुलाक' न्याय से समझ गई कि आर्यसमाज में शास्त्रीय दम बिलकुल नहीं।

आखोरी तीसरी टक्कर तो आर्यसमाज के लिए उनकी मृत्यु का वारन्ट सिद्ध हुई। श्री शास्त्रार्थ-महारथी जी जब सदलबल आर्यसमाज के मंच पर जा पहुँचे तो वे किंकर्तव्य विमूढ हो गये, इधर शास्त्रार्थ सुनने के लिए आतुर अन्यून चालीस हजार जनता को—अभी पांच मिनट के बाद शास्त्रार्थ आरम्भ होगा–ऐसी झूठी सान्त्वना देते रहे, उधर नगर न्यायाधीश और वरिष्ठ पुलिस अधिकारी को टेलीफून से सूचना देकर शास्त्रार्थ से बाल २ बचने का शिरतोड़ प्रयत्न करते रहे। विश्वस्त निरीक्षकों की ओर से यह रहस्योद्‌घाटन हुआ है कि वस्तुतः आर्यसमाजी श्री शंकराचार्य पुरी को, श्रीस्वामी करपात्री जी महाराज को एवं शास्त्रार्थ-महारथी जी और पञ्चानन जी को मदाखलत वेजा कानून की गिरिफ्त में लाने के प्रयत्न में थे परन्तु जब महारथी जी ने न्यायाधीश को आर्यसमाज का लिखित निमन्त्रण-पत्र दिखलाकर यह वतलाया कि वे आर्यसमाज द्वारा निमन्त्रित अतिथि हैं, तब आर्यसमाज के नापाक इरादों पर पानी फिर गया। उनकी दुरभिसन्धि विफल हो गई। अन्त में अगत्या १४४ धारा घोषित करवा कर शास्त्रार्थ से अपनी जान बचाई।

आवालवृद्ध जनता को उक्त काण्ड की यह असलियत विदित हो गई, जिसका प्रमाण वह अभूतपूर्व नगरशोभा यात्रा का दृश्य था कि जिसमें लाखों व्यक्ति सम्मिलित होकर अपना सौहार्द प्रकट कर रहे थे। समाचार पत्रों में प्रकाशित होने वाला इस समारोह का विवरण भी इस ग्रन्थ में दिया गया है, इस प्रकार पूरी एक शताब्दी की ऐतिहासिक सामग्री उक्त पुस्तक में समाविष्ट की गई है। इस शताब्दी के स्वर्गीय और वर्तमान धर्म-धुरन्धरों के अलभ्य चित्र तथा अभिनव देवालयों के चित्र भी पचासों की संख्या में छापे गए हैं। पाठक अनुभव करें कि इस को भव्य बनाने में हमने सामर्थ्य भर प्राणपण से चेष्टा की है।

प्रस्तुत संग्रह

आज से ठीक एक शती पूर्व विक्रम संवत् १६२६ कार्तिक शुक्ला १२ सोमवार को काशीपुरी में राजा माधोसिंह के आनन्दोद्यान में स्वामी दयानन्द सरस्वती के साथ वाराणसी के विद्वानों का कथित शास्त्रार्थ हुआ था, वस्तुतः उसे शास्त्रार्थ न कहकर अनौपचारिक वादानुवाद गोष्ठी मात्र कहा जाए तो यह अधिक उचित होगा, क्योंकि इसमें न तो पहिले से उभयपक्ष-सम्मत कोई विषय नियत हुआ था, न प्रामाण्यभूत ग्रन्थों का निर्णय हुआ था और नांही वादी प्रतिवादी के लिये बोलने के समय की इयत्ता का ही निश्चय हुआ था। काशी के विद्वानों की ओर से शास्त्रार्थफल-निर्णायक मध्यस्थ के होने का प्रस्ताव अवश्य किया गया था परन्तु दयानन्द जी ने वह स्वीकार नहीं किया था। ऐसी दशा में होने वाली बातचीत का क्या परिणाम रहा था यह उस समय के पत्रों के विवरणों से ही जाना जा सकता है। जो कि आगे पृष्ठ ८६ पर छपे हैं।

आर्यसमाज की सैद्धांतिक मृत्यु तो स्वामी दयानन्दजी ने अपने जीवन काल में स्वयं ही कर डाली थी जबकि उन्होंने स्वयं अपने लिखे प्रथमावृत्ति सत्यार्थ-प्रकाश में से गोमेधयज्ञ, मृतश्राद्ध आदि विषयों को प्रूफ संशोधकों की मिलावट का सर्वथा मिथ्या बहाना करके निकाल डाला था, उसकी रही सही कपाल क्रिया चेलों ने कर डाली थी जो कि द्वितीयावृत्ति आदि सत्यार्थ-प्रकाशों में अद्यावधि छपे—द्विज विधवाओं के पुनर्विवाह का निषेध, सह-शिक्षा-निषेध, सहभोज निषेध, और अन्त्यजादि की अस्पृश्यता आदि विषयों की सयौक्तिक और सप्रमाण विद्यमानता में भी बड़े घड़ल्ले के साथ निर्लज्जता पूर्वक उक्त सब कार्यों को करने लगे। इस प्रकार आर्यसमाज कोई धार्मिक संगठन न रहकर काँग्रेस, कम्यूनिष्ट और सोशलिष्टों का पुछल्ला बन कर रह गया था।

शिक्षा के क्षेत्र में भी स्वामी जी की स्थापित संस्कृत पाठशालाएं सबकी सब समाप्त कर दी गईं। गुरुकुल, जो कि वेद के विद्वान् बनाने के लिए कभी स्थापित हुये थे, जिनमें पढ़कर निकलने वाले स्नातकों के सम्बन्ध में बड़े अभिमान के साथ यह प्रचार किया गया था कि—

आवेंगे खत अरब से उनमें लिखा यह होगा।
गुरुकुल का ब्रह्मचारी हलचल मचा रहा है॥

परन्तु हुआ इसके सर्वथा विपरीत! गुरुकुल काँगड़ी का प्रथम स्नातक स्वामी

श्रद्धानन्द का ज्येष्ठ पुत्र, विद्यावाचस्पति इन्द्र जी का ज्येष्ठ श्रेष्ठ भ्रातृ ज्यों ही विलायत गया कि लौट कर नहीं आया। प्रसिद्ध है किसी गोरी लेडी के फन्दे में फंस कर ईसाई बन गया, जिसकी साध्वी धर्मपत्नी अन्त तक वैधव्य जीवन बिताती रही। अतः उपर्युक्त तुकबन्दी इस रूप में वदल गई।

आवेंगे न्यूज छपकर योरुप अमेरिका से।
गुरुकुल के दुर्विचारी क्रष्टान बन गए हैं॥

काँग्रेस द्वारा गांधी-शताब्दी का और सिक्खों द्वारा गुरु नानक जी की पंचम शताब्दी का आन्दोलन देखकर दयानन्दियों को चन्दा मांगने का जब अन्य कुछ वहाना न मिला तो 'काशी-शास्त्रार्थ-शताब्दी' का गड़ा मुर्दा उखाड़ डाला और समझा कि शायद इस पुरानी घटना की यथार्थता का ज्ञाता सनातनधर्म का कोई पुराना महोपदेशक अवशिष्ट नहीं रहा है, इस लिये इस मिथ्या काण्ड को प्रोपेगण्डे के छल बल से उछालकर स्वामी दयानन्द को काशी-विजयी वना डालो। भगवान् गञ्जे को नाखून नहीं देता, नहीं तो वह खुजला-खुजलाकर लहू-लुहान ही हो बैठे। दयानन्दियों को यह स्टन्ट वहुत मंहगा पड़ा क्योंकि हमारे पास अभी इस काण्ड का प्रामाणिक सब मसाला सुरक्षित है। हम उसे ज्यों का त्यों प्रकाशित करके समस्त जनता के सामने उपस्थित कर रहे हैं, जिससे प्रत्येक सत्यान्वेषी भली प्रकार यह जान सकेगा कि उस कथित शास्त्रार्थ में स्वामी दयानन्द को किस प्रकार बुरी तरह मुंह की खानी पड़ी थी, और उस समय तक के अपने विचारों को मिथ्या मानकर उनमें परिवर्तन करने को विवश होना पड़ा था।

कहना न होगा कि हमने इस संग्रह को अत्युपयोगी बनाने के लिये जहाँ उक्त शास्त्रार्थ में होने वाली स्वामी जी की पराजय का तात्कालिक समाचार पत्रों में प्रकाशित विवरण उद्धृत करके भाँडा फोड़ किया है और राजा शिवप्रसाद सितारे हिन्द से हुये स्वामी जी के वेद-संज्ञा विषयक लेखबद्ध विचार को भी अंकित कर दिया है वहां दयानन्दी समाज के प्रौढ़ कहे जाने वाले महोपदेशकों से हुवे कतिपय अन्यान्य प्रसिद्ध शास्त्रार्थों का संक्षिप्त परिचय तथा मध्यस्थों द्वारा निर्णय के फल-स्वरूप प्रदत्त विजय-पत्र भी छाप दिये हैं। आशा है पाठक इस एक ही पुस्तिका में दयानन्द और दयानन्दियों की अनेक पराजय पढ़कर सनातनधर्मी सिद्धान्तों की ध्रुवता का अनुमान कर सकेंगे।

——:o:——

श्री हरिः

धर्मस्य विजयो भूयादधर्मस्य पराजयः ।
सद्भावना प्राणिभृतां भवेद् विश्वस्य भावुकम् ।।

इन्द्र-प्रस्थीय श्रीसनातनधर्मदिग्विजयमण्डलस्य

शस्त्रार्थ घोषणा

काशीपुरीवादशतीयमन्त्रिन् ! मतिर्नमस्ते सततं शमस्ते ।
मिथ्यैव शास्त्रार्थजयभ्रमस्ते, शास्ता भवेद्दण्डधरो यमस्ते ।।१।।
स्थानीय-संवाददलेषु मुद्रितं, विलोकितं वादनिमन्त्रणं तव ।
नैषास्ति शास्त्रार्थविधान-प्रक्रिया, वृथैव किं गर्जसि गेह-संस्थितः ।२।
हिन्द्युन्नतिर्गोवधवर्जनञ्च, म्लेच्छीयधर्म्मान्तरणावरोधः ।
द्वयोर्हि नाविष्टतमः प्रचारो विहाय तं गेहयुधि प्रवृत्तः ।।३।।
चेदस्य वादस्य समर्थकोऽसि, तदा स्वहस्ताक्षरितं पलाशम् ।
पञ्जीकृतं देहि यथाविधानं, सज्जा वयं दुर्मत-मर्दनाय ।।४।।
शास्त्रार्थो लेखबद्धः परिषदि भविता संस्कृतश्लोकयुक्तः,
श्लोकानां राष्ट्रभाषा ह्यपि च तदनुगा श्रावणीया जनेभ्यः ।
मध्यस्थः शास्त्रवेत्तोभयदल-सुमतः कोपि निर्णायकः स्यात्,
वेदा एव प्रमाणं विषयनयविधौ साधिकारोऽहमस्मि ।।५।।
महोत्सवस्तेऽथ निमन्त्रको भवान् त्वमेव वादे भविताऽऽतिथेयकः ।
न पूर्वपक्षस्तव शास्त्रसम्मतो न वा प्रभुस्त्वं विषयस्य निर्णये ।।६।।

तस्मान्मया वादविधि-प्रथार्थितो निश्चीयते सद्विषयोऽतिशङ्किलः ।
ग्रंथा दयानन्दकृता अवैदिका भ्रष्टाः सदोषाः स्वकपोलकल्पिताः ।७।
चेदस्ति कश्चिद् भुवि जीवितोऽत्र श्रीमद्दयानन्दमतानुयायी ।
प्रश्नान् मदीयान् किल वेदमन्त्रैः संयोज्य संयोज्य समादधातु ।।८।।
यद्वाऽनया वादविधानरीत्या स्थातुं समर्थोऽसि न चेन्ममाग्रे ।
विलिख्य देहि स्वपराजयं द्राक्, तदा तवेष्टोविनयोऽपि मान्यः ।।९।।

चुनौती स्वीकार

कुछ संवादपत्रों में आर्यसमाज की ओर से मुद्रित यह समाचार देखने में आया कि कार्तिक शुक्ल के अन्तिम सप्ताह में वाराणसी में 'काशी-शास्त्रार्थ-शताब्दी' का आयोजन होगा जिस में स्वामी दयानन्द के कथित शास्त्रार्थ की विजय के गीत गाए जाएंगे और मूर्तिपूजकों को पुनरपि शास्त्रार्थ करने का अवसर दिया जाएगा। यद्यपि इस समय धर्मविश्वासी प्रजाजनों के सामने गोहत्या-विरोध, राष्ट्रभाषोत्थान और विधर्म्मियों द्वारा किये जाने वाले धर्मान्तरण की रोक थाम जैसी कई एक हिंदु जाति के जीवन-मरण की समस्याएं मुंह बाएं खड़ी हैं, जिन का समाधान सभी सम्प्रदायों के सामूहिक प्रयत्नों पर निर्भर है, ऐसे आड़े वक्त में आर्यसमाज की यह विघटन चेष्टा अतीव निन्द्य और उपेक्षणीय है, तथापि 'उपस्थितस्य गतिश्चिन्तनीया' न्याय से हम दयानन्दियों के आह्वान को स्वीकार करते हैं। एक शताब्दी पूर्व उक्त कथित वितण्डा में स्वामी दयानन्द जी की जो दुर्गति पूर्ण पराजय हुई थी वे उसे जीवन भर नहीं भूले। यह तथ्य तत्कालीन श्री भारतेन्दुजी जैसे सम्भ्रान्त व्यक्तियों के लेखों से प्रमाणित है। तथापि 'जो चींटी को पर उगे हैं' हम उनके प्रतिकार के लिए कटिबद्ध हैं। समाचार पत्रों में सूचना मात्र देने से शास्त्रार्थ नहीं हुआ करते, यदि वस्तुतः दयानन्दियों में कुछ दम खम है तो वे विधिवत् लिखित आह्वान पत्र हमें प्रदान करें।

शास्त्रार्थ संस्कृत-भाषा में लिखित श्लोक-बद्ध होगा, उसका हिन्दी-अनुवाद भी साथ २ जनता को तत्काल सुनाया जाएगा। दोनों पक्षों द्वारा अभिमत कोई निष्पक्ष [संस्कृतज्ञ ईसाई या मुसलमान तक भी] निर्णायक मध्यस्थ रहेगा। केवल वेद के ही प्रमाण लिये और दिये जाएंगे।

उत्सव आर्यसमाज का है, आर्यसमाज ही चैलेंज करता है इसलिये वाद-पद्धति के नियमानुसार वह स्वयं मनमाना पूर्व पक्ष नहीं कर सकता, किन्तु विषय निर्णय का एक मात्र अधिकार हमारा है, इसलिए हम घोषणा करते हैं कि 'दयानन्द कृत समस्त ग्रन्थ अवैदिक, भ्रष्ट, सदोष और स्वकपोल-कल्पित हैं'। यदि स्वामी दयानन्द का कोई शिष्य संसार में जीवित है तो वह हमारे प्रश्नों को वेद मन्त्रों द्वारा समाहित करे।

कदाचित् उपर्युक्त शास्त्र रीति से नियमानुसार शास्त्रार्थ करने में वह असमर्थ हो तो उसे अपनी पराजय लिख कर हमें प्रदान करनी चाहिए पश्चात् हम उसके निश्चय किये गये किसी अन्य विषय पर भी शास्त्रार्थ करने को सदैव प्रस्तुत हैं।

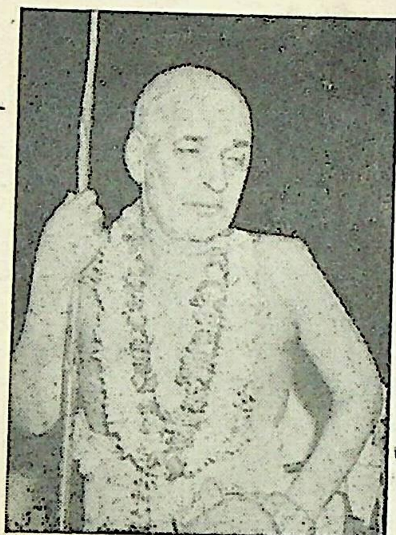
१०३ ए, कमलानगर, देहली स्थ:

उद्घोषक:

प्रेमाचार्य शास्त्री शास्त्रार्थ-पञ्चानन

[अक्षय नवमी २०२६] श्री स० ध० दिग्विजय मण्डलस्य प्रधानमंत्री





अभिनव शङ्करावतार—

अनन्त श्री स्वामी

हरिहरानन्द सरस्वती

स्वा० करपात्री जी महाराज

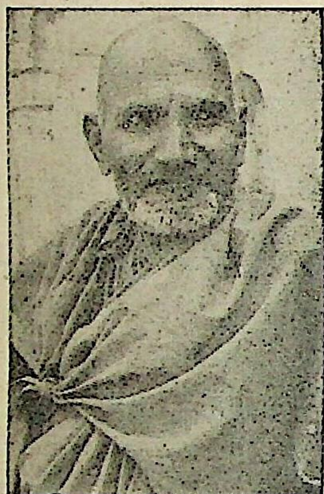
अ० भा० धर्म संघ के संस्थापक रामराज्य परिषद् के जन्मदाता, गोरक्षा के अगणित बार जेल यात्रा के कष्टों को सहन करने वाले अहर्निश धर्म रक्षा की चिन्ता में निमग्न सतत प्रचाररत अद्वितीय महात्मा है। काशी शास्त्रार्थ विजय महोत्सव के आयोजन और सफलता का श्रेय एकमात्र आपको है।

श्री जगद् गुरु शङ्कराचार्य

स्वामी अभिनव सच्चिदानन्द तीर्थ महाराज



द्वारका-शारदा पीठाधीश्वर आप सर्व गुण सम्पन्न धर्माचार्य है, धार्मिक जगत् के अतिरिक्त शासक वर्ग भी आप में अत्यधिक श्रद्धा रखता है।



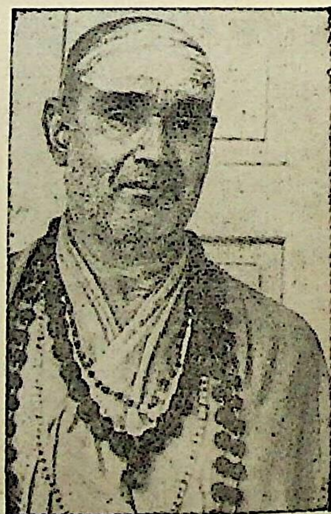
श्री जगद् गुरु शङ्कराचार्य

स्वा० कृष्ण बोधाश्रम महाराज

ज्योतिष पीठाधीश्वर, आप अखिल भारतीय सनातनधर्म संघ के आजीवन महाध्यक्ष हैं, आजके युग में यदि 'मनस्येकं वचस्येकं कर्मण्येकं महात्मनाम्' के प्रत्यक्ष दर्शन करने हों तो आप इसके निदर्शन है।

श्री जगद् गुरु शङ्कराचार्य—

स्वा० निरंजन देव तीर्थ महाराज



पुरी गोवर्द्धन पीठाधीश्वर। आप सनातन धर्म के सिद्धान्तवादी प्रवल प्रचारक हैं, नास्तिकों और अर्ध नास्तिकों के धर्म विरोधी कृत्यों का पर्दाफाश करने में आप अपने न केवल मठ और पद को ही अपितु प्राणों को भी सदैव दाव पर लगाने को उद्यत रहते हैं गोवध बन्द करने को ७२ दिन का आपका अनशन विश्व के रिकार्ड में अद्वितीय है।

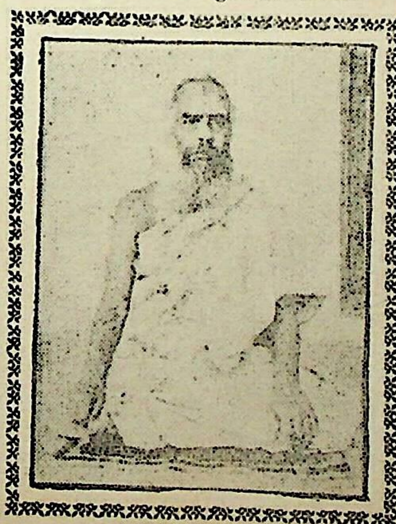


जगदाचार्य —

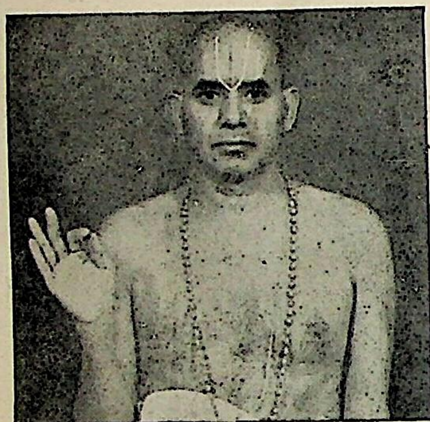
श्री स्वामी अरणङ्कराचार्य महाराज

प्रतिवादी भयङ्कर मठाधीश्वर कांची। आप संस्कृत के अद्वितीय विद्वान् और अनेक ग्रन्थों के लेखक हैं। तामिल तैलगू अंग्रेजी हिन्दी और संस्कृत सभी भाषाओं में आपका धारा प्रवाह भाषण होता है।

प० पू० पाद श्री प्रभुदत्त जी ब्रह्मचारी



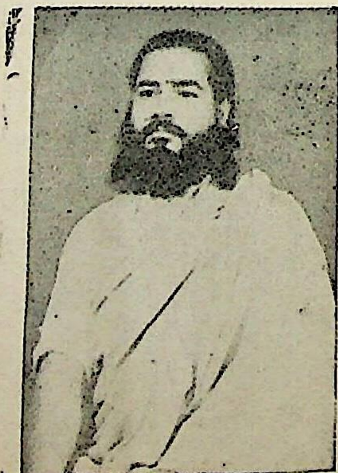
आपने कीर्तन के प्रसार में सर्वाधिक सफलता प्राप्त की है। भागवती कथा जैसे बृहद ग्रन्थ का सम्पादन आपकी विद्वत्ता का प्रबल प्रमाण है। गोरक्षा के लिए आपका लम्बा अनशन विश्व विख्यात है।



श्री जगद्गुरु रामानुज भगवत्पादीय—

स्वा० अनिरुद्धाचार्य वेङ्कटाचार्य महाराज

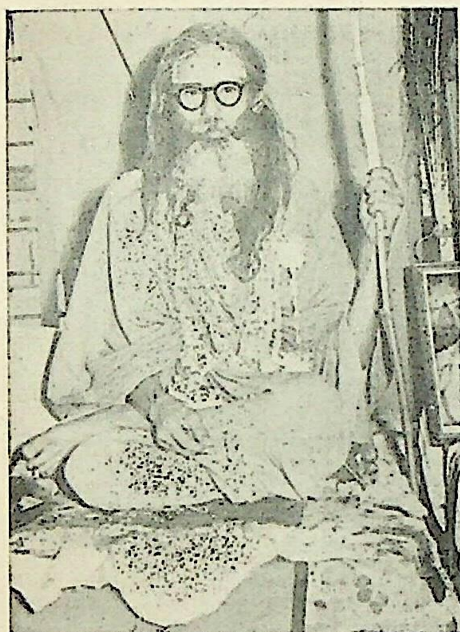
आप सनातन धर्म के प्रौढ़ वक्ता तत्त्वान्वेषी उदार चरित महात्मा है। गुजरात प्रान्त के सभी बड़े बड़े नगरों में आपके द्वारा संरक्षित देवस्थान धर्म प्रचार के प्रधान केन्द्र हैं।



श्री जगद्गुरु निम्बार्काचार्य—

स्वा० श्री राधा सर्वेश्वर शरण महाराज

परशरामपुर पीठाधीश्वर, आप सनातन धर्म के जागरूक प्रहरी और अनवरत धर्म प्रचार में संलग्न दर्शनीय महाराज है।



श्री जगदाचार्य

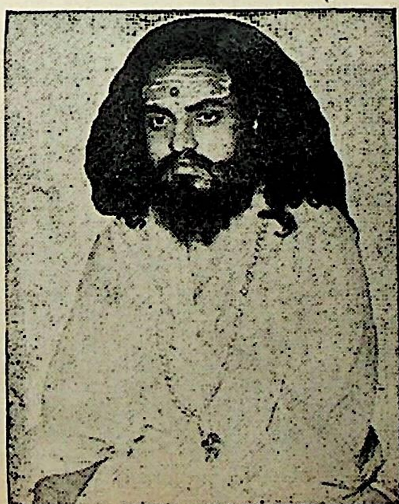
स्वामी नारदानन्द सरस्वती

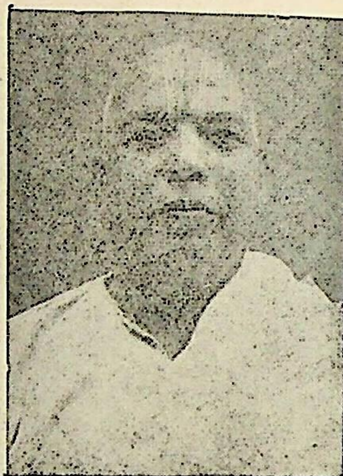
नैमिष व्यास पीठाधीश्वर। आपने सवा सौ से अधिक ऋषि-आश्रमों की स्थापना करके सनातन धर्म की संरक्षा का स्थायी प्रबन्ध किया है।

बालयोगी—

श्री स्वामी परमानन्द सरस्वती

एम० ए०, सनातन धर्म के प्रौढ़ विचारक और प्रचार संलग्न कर्म्मठ महात्मा है। हिन्दी रक्षा आन्दोलन में आपने जेल में असह्य यातनाएं सहन की थी।





शास्त्रार्थ-महारथी
श्री पं० माधवाचार्य शास्त्री

अनेक शास्त्रार्थोंमें आपने नास्तिकों को परास्त किया है, काशी के विजय-महोत्सव में भी आपको विजय प्राप्त हुई।



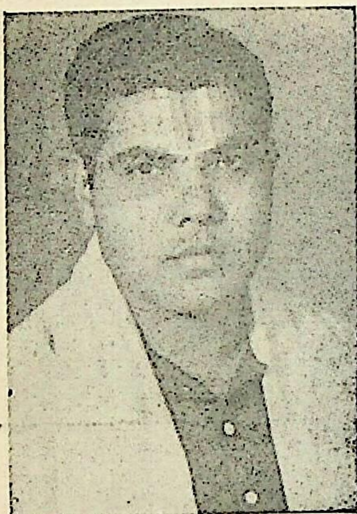
प्रतिवादि भयङ्कर
श्री पं० भीमसेन शर्मा

अनेक शास्त्रार्थों के विजेता और यथा नाम गुण व्याख्याता, आर्य-समाजी आपकी गदा का लोहा मानते है।

विद्यावाचस्पति
श्री पं० दीनानाथ सारस्वत शास्त्री



आपकी वज्र लेखनी से लिखे 'सनातन धर्मालोक' नामक ग्रन्थ के १० पुष्प आर्य-समाज के लिये एटम बम के समान है। उक्त ग्रन्थ वस्तुतः सनातन-धर्म के विश्व कोश के समान है।



शास्त्रार्थ पञ्चानन—

श्री पं० प्रेमाचार्य शास्त्री

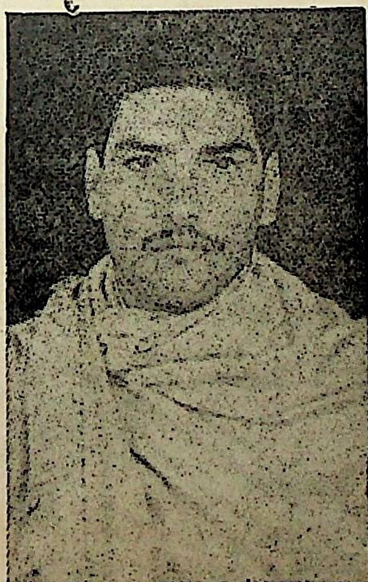
एम० ए० स्वर्ण-पदकविजेता नवोदित शास्त्रार्थी, जिन्होंने दयानन्दियों के सर्व-शिरोमणि विद्वान् म० वैद्यनाथ शास्त्री व्याकरणाचार्य को विदिशा (म०प्र०) के शास्त्रार्थ में पराजित करके 'शास्त्रार्थपञ्चानन' सम्मानोपाधि प्राप्त की है।

प्रसिद्ध वक्ता—

श्री पं० वीराचार्य शास्त्री

एम० ए० एम० लिट्

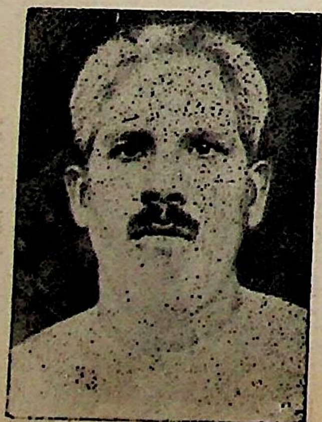
आप नवोदित शास्त्रार्थी और हिन्दी के प्रशस्त कवि हैं।





याज्ञिक सम्राट्
श्री पं० वेणीराम शर्मा गौड़ वेदाचार्य

आप भारत के मूर्धन्य याज्ञिक हैं अनेक ग्रन्थों के लेखक और श्रौत यज्ञों के विशिष्ट अनुष्ठाता है, कई शतकुण्डो यज्ञ आपके आचार्यत्व में सम्पन्न हो चुके हैं।



प्रसिद्ध विद्वान्—
श्री पं० श्यामलाल आचार्य

आप धर्मसंघ महाविद्यालय देहली के प्रधानाचार्य और सनातनधर्म के दुर्गपाल हैं।



।। श्रीगणेशाय नमः ।।

काशी शास्त्रार्थ विजयः

चार्वाकव्रातदम्भद्रुमदवहनो बौद्धयज्ञाङ्गयूपः[1]
ईसाई-सर्पताक्ष्यों यवनघनमरुत् कापडेयेभसिंहः[2] ।
सौशल्येष्टान्धकारक्षपण[3]-दिनकरः काम्यनिष्ठाद्रिवज्रः[4]
नित्यं दोधूयमानो जगति विजयते धर्मसङ्घध्वजोऽयम् ।।१।।

सनातनधर्म-सिद्धांत-घोषणा

वेदाः निश्वसितं प्रभोस्तदुदितो धर्मः, सुसेव्यो हरिः
अभ्यर्च्यः प्रतिमासु. सोऽवतरति, स्वस्थास्तदंशाः सुराः ।
जन्माढ्या गुणकर्मसर्गसुदृढा-वर्णव्यवस्था मता
श्राद्धं वै मृतपैतृकं, श्रुतिमता सिद्धान्तविज्ञापना ।।२।।

दयानन्दियों के प्रति चेतावनी

'अन्धे' संग्रामबन्धे यमनिगडगते कापड़ीवंशदंशे
'लेखे' रेखावशेषे ह्यनलनलिकया श्रद्धयेद्धेऽपि विद्धे ।
'तोपे' पोपाग्निकोपे कृमिकुललुलिते भग्नभाले च 'देवे'
बुद्धे विट्-क्लिन्नकण्ठे शृणुत हितवचस्त्यज्यतां देवनिन्दा।।३।।

---

1. यागीय पशु 2. कापड़ी-वंशोद्भवदयानन्दमतावलम्बी 3. सोशलिष्ट 4. कम्यूनिष्ट ।

सन्मित्रं विदुषां सतामनुचरं दासश्च दीक्षावताम् ।
धीराणां च वशंवदं स्वसृपतिं कुक्षिम्भरीणां तथा ॥
लण्ठानां लगुडं गरं गुरुमुषां नैयोगिकानां यमम् ।
इत्थं मामवगम्य सम्प्रति वरं सम्पाद्यतां वाऽवरम् ॥४॥

ईश्वरस्यावताराणां मूर्तीनां पूजनं श्रुतौ ।
प्रोक्तं तस्य निरासो वो कर्तुं केनापि शक्यते ॥५॥

वाराणस्यां दयानन्दो वादगोष्ठ्यां पराजितः ।
इति तात्कालिकैः पत्रैर्मुद्रितोऽत्र प्रकाश्यते ॥६॥

भावार्थ—(१) वेद, श्रीमन्नारायण भगवान् के स्वाभाविक श्वासोच्छ्वास हैं। (२) वेद में जिसका प्रतिपादन किया गया है वही धर्म है। (३) एक मात्र भगवान् ही सबके आराध्य देव हैं (४) मूर्ति द्वारा उन्हीं की उपासना-पूजा होती है। (५) वह भगवान् अनेक विधअवतार धारण करते हैं। (६) स्वर्गादि लोकों में बसने वाले देवगण उन्ही भगवान् के अंगभूत हैं (७) जन्म प्रधान, गुण-कर्म-स्वभावोपलक्षित ब्राह्मणादि चार वर्णों की व्यवस्था है। (८) श्राद्ध, मृत पितरों का ही वेद प्रतिपादित है। सनातन-धर्म के सिद्धान्तों की वेद-सम्मत यह घोषणा है।

स्वा० दयानन्द के गुरु श्री विराजानन्द जन्मान्ध थे जो दुर्मृत्यु से मरे। कापड़ी वंशोद्भव दयानन्द जी एक-एक रोम फूटकर नरक चतुर्दशी को मरे। महाशय लेखराम छूरे द्वारा कतल किये गये। स्वा० श्रद्धानन्द जी गोली से उड़ा दिये गये। आर्यतोप ला० मनसाराम कैंसर के फोड़े में कृमि पड़ जाने से चल बसे। श्री देवेन्द्र शास्त्रार्थ करते समय मस्तिष्क की नस फट जाने से मंच पर ही ढेर हो गये। श्री बुद्धदेव विद्यालङ्कार पेट का आपरेशन हो जाने पर नली से मल का निःसारण करते करते परलोक-गामी हुए। सो महाशयो! आप हमारी हितयुक्त सम्मति मानो और भगवान् के अर्चावतारों की निन्दा छोड़ दो ॥३॥

मैं विद्वानों का सन्मित्र हूं। सज्जनों का अनुयायी हूं। दीक्षित साधकों का दास हूं। धीर पुरुषों का आज्ञाकारी हूं, पेटू महाशयों का बहनोई हूँ। लण्ठ-मूर्खों के लिए दृढ़ डण्डे के समान हूं। गुरुद्रोही जनों के लिए हलाहल विष हूँ। नियोगी महाशयों के लिये यमराज हूँ। बस! यह सब समझकर मुझ से भला या बुरा वास्ता डालना चाहिए ।।४।।

वेदों में भगवान् के अवतारों का और उनकी मूर्तियों की पूजा का वर्णन विद्यमान है जिसका खण्डन कोई भी कुतार्किक नहीं कर सकता ।।५।।

काशी के मूर्तिपूजा विषयक शास्त्रार्थ में दयानन्द जी बुरी तरह पराजित हुये थे। उस शास्त्रार्थ का प्रामाणिक विवरण तात्कालिक पत्रों में जैसा छपा था वह प्रकाशित किया जाता है ।।६।।

इससे आपाततः मूर्तिपूजा का सिद्धांत सर्व-शास्त्र-सम्मत सिद्ध हो जाता है। हमारे इस ग्रन्थ में भी पाठकों को मूर्तिपूजा की वैदिकता में किसी प्रकार का सन्देह अवशिष्ट न रहे, एतदथ गाड़ी भर प्रमाणों में से कतिपय नीचे उद्घृत करते हैं।

स्वामी दयानन्द द्वारा मानी गई मूर्तिपूजा की परिभाषा है कि—'किसी जड़ पदार्थ के सामने सर झुकाना वा उसकी पूजा करना सब मूर्ति-पूजा है।' (सत्यार्थप्रकाश, समु० ११,१२ पृष्ठ ४०४) इसी दृष्टिकोण को ध्यान में रखकर पाठक अधोलिखित प्रमाण पढ़ें।

काशी के इस शास्त्रार्थ समारोह में हमने मूर्तिपूजा साधक अकाट्य वेद प्रमाणों को मुद्रित करके दशसहस्र संख्यक परिपत्र वितीर्ण किये। परन्तु आर्यसमाज की ओर से इनका कुछ भी उत्तर नहीं दिया गया।

वेद में मूर्ति-पूजा का सर्वाङ्गपूर्ण वर्णन

१. त्र्यम्बकं यजामहे। (यजु. ३।६०)

(क) यजामहे पूजयामः त्र्यम्बकमिति-सायणः।

(ख) त्रीणि अम्बकानि यस्य स त्र्यम्बको रुद्रस्तं त्र्यम्बकं यजामहे इति यास्कः।

(ग) नेत्रत्रयोपेतं रुद्रं यजामहे पूजयाम-इति महीधरः।

(घ) (त्र्यम्बकं) रुद्ररूप जगदीश्वर है। (यजामहे) उसकी निरन्तर स्तुति करें। (दयानन्द सरस्वती)

मूर्ति के अंगों को नमस्कार

मुखाय ते पशुपते यानि चक्षूंषि ते भव। त्वचे रूपाय संदृशे प्रतीचीनाय ते नमः ॥१॥

अंगेभ्यस्त उदराय जिह्वाय आस्याय ते। दद्भ्यो गन्धाय ते नमः ॥ (अथर्व ११।२।५-६)

हे पशुपते! हे भव! (ते मुखाय नमः) तेरे मुख के लिए नमस्कार है। (यानि ते चक्षूंषि) जो तेरी आंखे हैं उनको नमस्कार है। तेरे (त्वचे रूपाय संदृशे प्रतीचीनाय ते नमः) त्वचा रूप दर्शन और पीठ के लिये नमस्कार है ॥५॥ (ते अंगेभ्य उदराय जिह्वायै आस्याय) तेरे अंगों उदर जिह्वा और मुख के लिए नमस्कार है। (ते दद्भ्यः गन्धाय नमः) तेरे दान्तों के लिए और गन्ध के लिये नमस्कार है ॥६॥ (श्रीपाद दामोदर सातवलेकर कृत भाषार्थ)

'इस सूक्त में रुद्र, भव, शर्व, पशुपति आदि शब्द आए हैं जो उस एक ही परमेश्वर के वाचक हैं।' इस प्रकार श्री सातवलेकर जी ने पूरे सूक्त का रुद्र देवता, जो कि अमर्त्य और ब्रह्माण्ड निर्माता है; स्वीकार किया है।

पं० राजाराम शास्त्री, प्रोफेसर डी. ए. वी. कालेज ने भी यही अर्थ किया है और अगले मन्त्र में प्रयुक्त 'अन्धकघाती' शब्द के स्पष्टीकरण में वाल्मीकिरामायण (३।३२) में पठित अन्धकासुर वाली कथा का इसको मूल प्रकट किया है।

मूर्ति निर्माण का विधान

अथ मृत्पिण्डं परिगृह्णाति। तन्मृदश्चापां च महावीराः कृता

भवन्ति । प्रादेशमात्रं शिरः । त्र्यंगुलं मुखं नासिकामिवास्मिन्नेतद्
दधाति ॥१॥ (शतपथ १४।१।२।१६–१७)

अर्थ—इसके अनन्तर मृत्तिका के पिण्ड को ग्रहण करे। उस मिट्टी और जल को (मिलाकर) उससे 'महावीर' (यज्ञ के अन्यतम देवों) की मूर्तियें बनाई जाएं। प्रादेश (अंगूठे और तर्जनी के फैलाव के बराबर) शिर बनाया जाए। तीन अंगुल का मुख बनावे। नासिका का निर्माण किया जाए।

अक्षिणौ……कर्णाविवास्मिन् दधाति ॥२॥

(शतपथ१४।३।२।१७)

अर्थ—दो आंखें और दो कान इस प्रतिमा के बनाए।

वाचं दधाति । नाभिः सपृथा । बाहु एवा० हस्तावेवा०
उरून् एवा० जानुनो एवा० पादावेवास्मिन्नेतद्दधाति ॥३॥

(शतपथ १४।३।१।१६–२२)

अर्थ—जिह्वा बनाए। नाभि गहरी बनाए। दो भुजा, दो हाथ, दो जंघाएं, दो घुटने और दो पांव बनाए।

प्राणान्नेवास्मिन्नेतद्दधाति ॥४॥ (शतपथ १४।१।१।२१)

अर्थ—प्राण प्रतिष्ठा द्वारा प्राणों का आधान किया जाए।

संवत् १९५९ में (वैदिकयन्त्रालय, अजमेर में मुद्रित शतपथ पृष्ठ ६८०) से उद्धृत।

यही प्रकरण शतपथ के अतिरिक्त कौषीतकि (२।१) गोपथ उत्तर (२।६) ऐतरेय (१।२२) कौषीतकि (८।७) तथा कात्यायन श्रौतसूत्र (२६।१४) से (२६।७।५०) तक आदि ग्रन्थों में भी विद्यमान है। यजुर्वेद माध्यन्दिनी संहिता अध्याय ३६ से ३९ तक उव्वट महीधर भाष्य में भी यह प्रकरण स्पष्ट उल्लिखित है।

वेद में प्रतिमा शब्द

यो विश्वस्य प्रतिमानं बभूव । स जनास इन्द्रः ॥१॥

(अथर्व २०।३४।६)

अर्थ—'जो विश्व की प्रतिमा हो गया है......वह इन्द्र अर्थात् जगत् का एक राजा है। (श्रीपाद दामोदर सातवलेकर कृत वेदामृत पृ० द्दश

संवत्सरस्य प्रतिमां यां त्वा रात्री उपास्महे।

सा न आयुष्मतीं प्रजां रायस्पोषेण सँसृज ॥२॥

(अथर्व० ३।१०।३)

अर्थ—हे (रात्रिः!) अभिमत वर देने वाली देवी (संवत्सरस्य) प्रकार अनेक ब्रह्माण्ड जिसमें बसे हुए हैं उस परमेश्वर की (यां त्वाम्) तेरी (प्रतिमाम्) मूर्ति की हम (उपास्महे) उपासना करते हैं, (सा) (नः) हम सबको (आयुष्मतो प्रजाम्) दीर्घायु वाली सन्तति (रायस्पोषेण) धन्य-धान्य की अभिवृद्धि से (संसृज) सम्यक् संयुक्त कर।

संवत्सरस्य प्रतिमामिति पिष्टमयीं प्रतिकृतिं कृत्वोदङ्मुखीं उपवेशयेत्। (परिशिष्ट ६।१)

अर्थ—संवत्सराख्य काल भगवान् की ब्रीही यव आदि की पिष्टि निर्मित मूर्ति बनाकर उसे उत्तर की ओर मुख करके प्रतिष्ठापित करे।

प्रतिमा" प्रतिकृतिस्वरूपाँ 'प्रतिनिधित्वेन निर्मीयते इ प्रतिमा" त्वा त्वाँ उपास्महे सेवामहे। (सायणः)

अर्थ—प्रतिमा अर्थात् प्रतिकृति स्वरूप मूर्ति को कहते हैं। क्योंकि प्रतिनिधि रूप से निर्मित होती है।

यदा दैवतायतनानि कम्पन्ते, दैवतप्रतिमाः हसन्ति.... तदा प्रायश्चित्तम्॥३॥ (सामवेदीय षड्विंश ब्राह्मण ५।१०)

अर्थ—जब देव स्थान कांपते हों और देव प्रतिमाएँ हँसती रोती जान पड़ती हों, तब सम्भावित संकट की निवृत्ति के लिये प्रायश्चित्त कर चाहिये।

प्राण प्रतिष्ठा

ऐतु प्राणा ऐतु मनः ऐतु चक्षुरथो बलम् शरीरमस्य संविदाम्।

(अथर्व ५।३०।१२)

आवें प्राण, आवे मन, आवें नेत्र, तब बल, इसका शरीर सारी शक्तियों के साथ मेल करे। (प्रो० राजाराम कृत अर्थ)

मूर्ति में आवाहन

एह्याश्मानमातिष्ठाश्मा भवतु ते तनुः।

कृण्वन्तु विश्वेदेवा आयुस्ते शरदः शतम्॥ (अथर्व २।१३।४)

अर्थ—पधारिये! इस पाषाण में विराजिए। यह पाषाण प्रतिमा आप का शरीर हो। सब दिव्य शक्तियें तुम्हारी अनन्त आयु करें।

पाषाण-प्रतिमानिष्ठ दिव्य देव को नमस्कार

ऋषीणां प्रस्तरोऽसि नमोस्तु दैवाय प्रस्तराय (अ० १६।२६)

अर्थ—तुम क्रान्तदर्शी ऋषियों के प्रस्तर प्रतीक हो दिव्य शक्ति सम्पन्न प्रस्तर प्रतीक रूप आपको नमस्कार हो।

भोग लगाना

वायवा याहि दर्शते मे सोमा अरं कृताः।

तेषां पाहि श्रुधि हवम्। [ऋ. १।२।१] [आर्याभिविनय पृष्ठ १८]

[स्वामी दयानन्द कृत अर्थ] हे अनन्त बल परेश वायो दर्शनीय! आप अपनी कृपा से ही हम को प्राप्त हो। हम लोगों ने अपनी अल्पशक्ति से सोम [सोमवल्यादि] औषधियों का उत्तमरस सम्पादन किया है और जो कुछ भी हमारे श्रेष्ठ पदार्थ हैं वे आपके लिये 'अरङ्कृता' अलङ्कृत अर्थात् उत्तम रीति से हमने बनाए हैं और वे सब आपके समर्पण किये गए हैं, उन को आप स्वीकार करो [सर्वात्मा से पान करो] जैसे पिता को पुत्र छोट चीज समर्पण करता है उस पर पिता अत्यन्त प्रसन्न होता है वैसा आप हमों पर होवो।

प्रतिमा ईश्वर है

कासीत्प्रमा प्रतिमा किं निदानं···यद्देवा देवमयजन्त विश्वे।

(ऋक् १०।१३०।३)

अर्थ—प्रश्न—यथार्थज्ञान, मूर्ति कारण आदि क्या थे (उत्तर) समस्त देवताओं ने जिस ईश्वर का भजन किया वही सब कुछ था।

ईश्वर की अनेक मूर्तियें

तदेवाग्निस्तदादित्यस्तद्वायुस्तदु चन्द्रमाः ।

तदेव शुक्रं तद् ब्रह्म ता आपः स प्रजापतिः ॥ (यजु० ३२।

अर्थ—(सातवलेकर) वह ही अग्नि, वह ही आदित्य वह ही वा वह ही निश्चय से चन्द्रमा है वही शुक्र अर्थात् शुद्ध और पवित्र है, वह आप् अर्थात् जल है वह ही प्रजापति है।

जड़ भूमि को नमस्कार

शिलाभूमिरश्मा पांसुः सा भूमिः संधृता धृता ।

तस्यै हिरण्यवक्षसे पृथिव्या अकरं नमः ॥

(अथर्व. १२।१।२

अर्थ—(सातवलेकर जो शिला पर्वत पत्थर और धूलियुक्त भू है···उस भूमि को नमस्कार करते हैं।

[प्रो० राजाराम] चट्टान मैदान पत्थर और धूलि......पृथ्वी को नमस्कार करता हूँ [इस सूक्त की देवता भूमि है]

सूर्य पिण्ड को नमस्कार

उद्यते नमः उदायते नमः उदिते नमः ।

अस्तमयते नमोऽस्तमेष्यते नमोऽस्तमिताय नमः ॥

(अथर्व. १७।१।२२-२३)

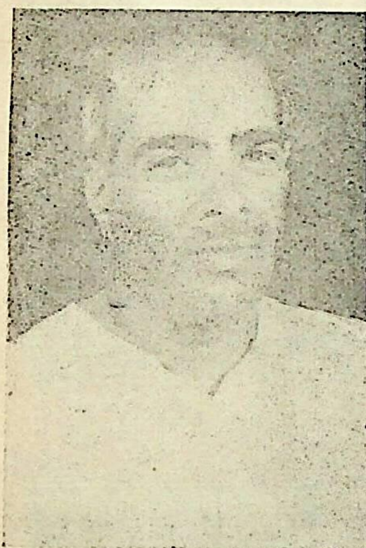
अर्थ—[सातवलेकर] उदित होने वाले को नमस्कार ऊपर जाने के लिए नमस्कार, ऊपर को प्राप्त हुये को नमस्कार, अस्त होने वाले नमस्कार, अस्त को जाने वाले को नमस्कार, अस्त हुए को नमस्कार।

[प्रो० राजाराम] ने भी यही अर्थ किया है। इस सूक्त का दे सूर्य है।

अथैतमात्मनः प्रतिमामसृजत ।

[पृष्ठ ५५३] (शतपथ ११।१।८

अर्थ—अनन्तर परमेश्वर ने यह चराचर विश्व अपनी प्रतिमा = बनाया।



साहित्य रत्न—

श्री पं० श्रीकराठ शास्त्री

व्याकरणाचार्य एम० ए०

आप 'लोकालोक' द्वारा नास्तिकों का मुख मर्दन करने में सदैव जागरूक हैं और 'क्यों' आदि ग्रन्थों के सहायक लेखक हैं।

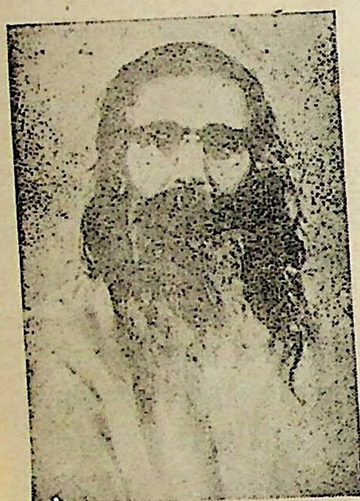
सुप्रसिद्ध लेखक—

श्री भक्त रामशरण दास

(पिलखुवा)

हिन्दी की शायद कोई ऐसी पत्र पत्रिका हो जिसमें कि आपके लेख न छपते हों। पुनर्जन्म सम्बन्धी और अन्यान्य चमत्कार पूर्ण लेखों का आपके यहा इतना बड़ा संग्रह है कि जिसके निमित्त आपको अपने निवास स्थान का एक बड़ा हाल कमरा संग्रहालय के रूप में सुरक्षित करना पड़ा है।





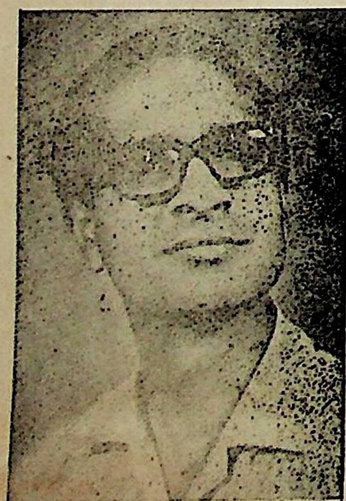
रा० स्व० संघ के प्राण मा० स० गोलवलकर (गुरुजी)

हिन्दुत्व की राष्ट्रीय चेतना जन-जन में भरने वाले तपस्वी राष्ट्र नेता। मूर्ति पूजा में आप की दृढ निष्ठा है

पं० ब्रजनारायण 'ब्रजेश'

हिन्दु महासभा के अध्यक्ष, ओजस्वी वक्ता, कट्टर सनातनधर्मी नेता ब्रजेश जी विचार एवं वेशभूषा दोनों से भारतीयता के उज्ज्वल प्रतीक हैं।

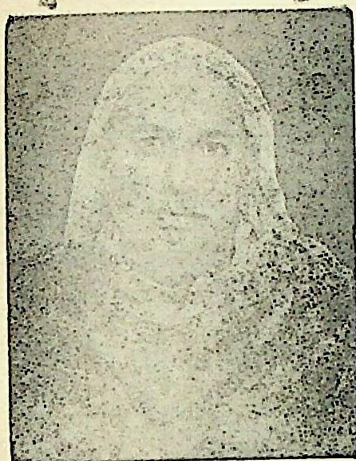




नवोदित पत्रकार—

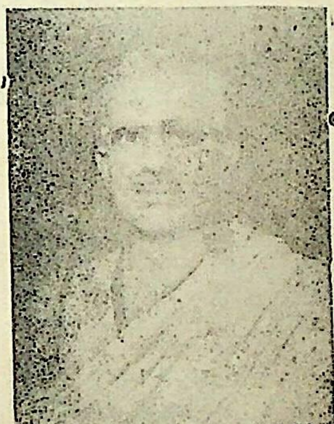
श्री शिवकुमार गोयल

हिन्दी के पत्रों में आपकी लोह लेखनी से लिखे लेखों की धाक है। आपकी कई पुस्तकें सरकार द्वारा पुरस्कृत होकर पुस्तकालयों की शोभा बढ़ा रही हैं।



श्री स्वा० गणेशानन्द जी

जिन्होंने अपना समस्त जीवन ही सनातन धर्म को अर्पण किया हुआ है। आपके तत्त्वावधान में कई गोशालाएँ पाठशालाएँ और सत्सङ्ग-भवन चल रहे है, सम्प्रति आप स० ध० प्रतिनिधि सभा पंजाब के सर्वस्व हैं।



श्री पं० कालीचरण पौराणिक

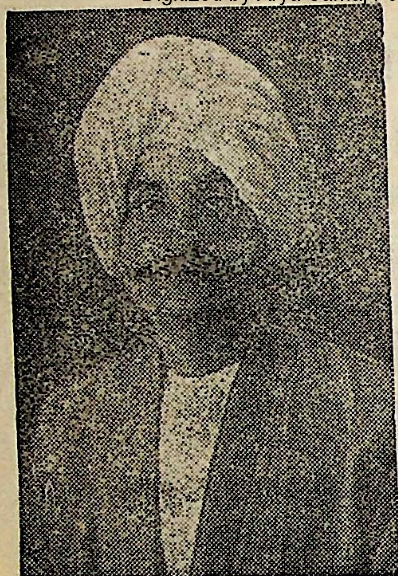
सनातन धर्म के प्रसिद्ध वक्ता, अनेक ग्रंथों के लेखक और निरन्तर धर्म प्रचार में संलग्न है।



प्रसिद्ध शास्त्रार्थी—

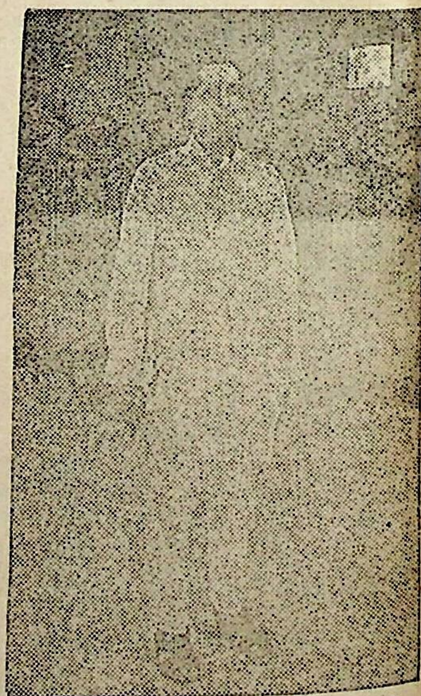
श्री लाला रामचन्द्र 'पक्का'

आप शास्त्रव्यसनी और सनातन-धर्म के सिद्धान्तवादी सुवक्ता हैं आपका पुस्तक दयानन्द-रहस्य पठनीय ग्रन्थों में है। जिसका उत्तर दयानन्दी आज तक नहीं दे सके। अनेक शास्त्रार्थों में आपने आर्य समाज के धुरन्धरों को परास्त किया है।



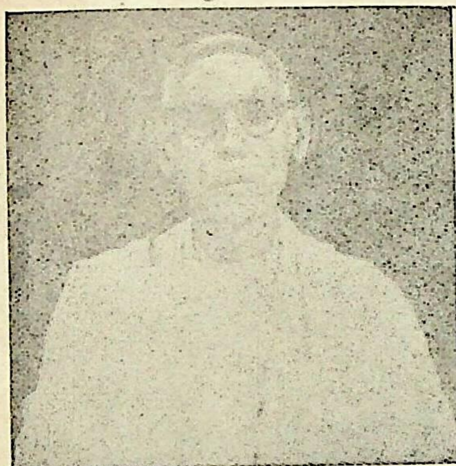
श्री दीवान हरिकृष्णजी रईस

आपके ही 'वंशीधर मन्दिर' के प्राङ्गण में हुये स्व० पं० दीनदयाल व्याख्यान-वाचस्पति के भाषणों से लाहोर में सनातन धर्म की नव जागृति हुई, थी आप सम्प्रति स० ध० प्रतिनिधि सभा पंजाब के अध्यक्ष है।



बाबू चमनलाल कतियाल

जिनका समस्त जीवन स० ध० प्रतिनिधि सभा पंजाब के अर्थ मन्त्री पद की सेवा करते बीता है अब भी आप सेवारत हैं



स्वा० मंगलपुरी जी महाराज

आपके हृदय में हर समय दो ही लगन रहती हैं सनातनधर्म का प्रचार और गोरक्षा। इन्हीं दो के लिए आपने सारा जीवन लगा दिया। 'लोकालोक' पर आपका विशेष स्नेह है।



श्री पं० फतहचन्द जी
(आराधक)

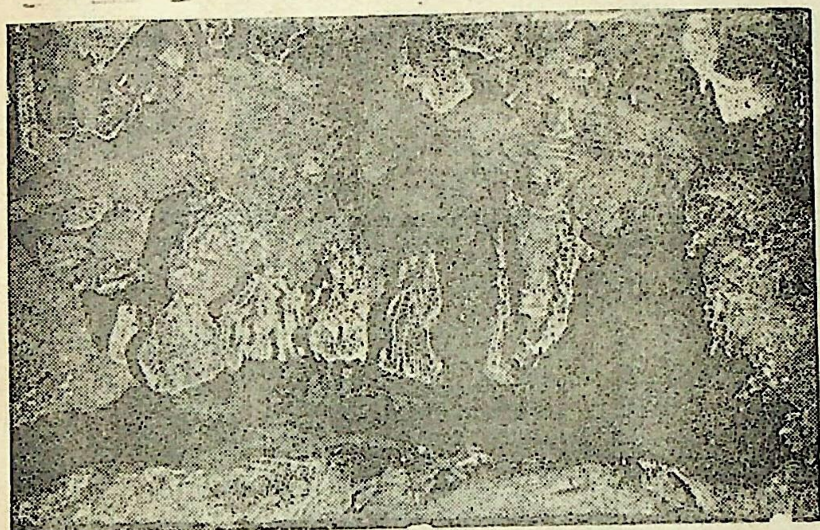
स्व० ब्रह्मचारी श्री जीवनदत्त जी महाराज



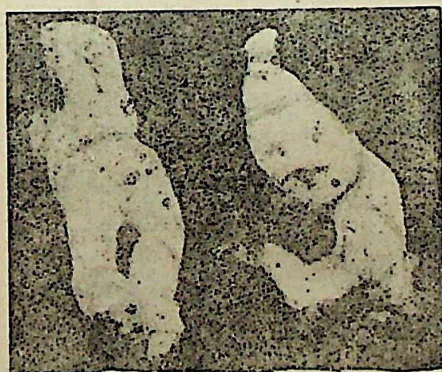
आप नरवर सांगवेद विद्यालय के सर्वस्व और एक आदर्श तपोनिधि ब्राह्मण थे।

सनातनधर्म विजय महोत्सव काशी

शङ्कासमाधान सम्मेलन का उद्घाटन करते हुये पुरीपीठाधीश्वर और सामने पगड़ा बांधे शास्त्रार्थमहारथी जो समाधान करने को प्रस्तुत दीख पड़ते हैं।



दिल्ली में प्राचीन किले की खुदाई में प्राप्त नीलम रत्न की बनी सर्वाङ्गपूर्ण पांच प्रतिमाएं, जो पांडवों के समय की बतलाई जाती हैं, जिन का मूल्य सम्प्रति कई लाख रुपए आंका गया है।



मोहन जोदड़ो में प्राप्त छः हजार वर्ष पुरानी देव प्रतिमाएं



शास्त्रार्थ का एक दृश्य

स० रुद्रदत्त आर्योपदेशक (दांये अन्तिम) ने जब यह स्वीकार किया कि 'मूर्ति में भगवान् हैं' तब मंचस्थ सभी विद्वान् साश्चर्य दृष्टि से उन्हें देख रहे हैं। अग्रिम पंक्ति में बांए से क्रमशः) बैठे श्री माधवाचार्य जी श्री प्रेमाचार्य जी और श्री वीराचार्य जी हंस रहे हैं।

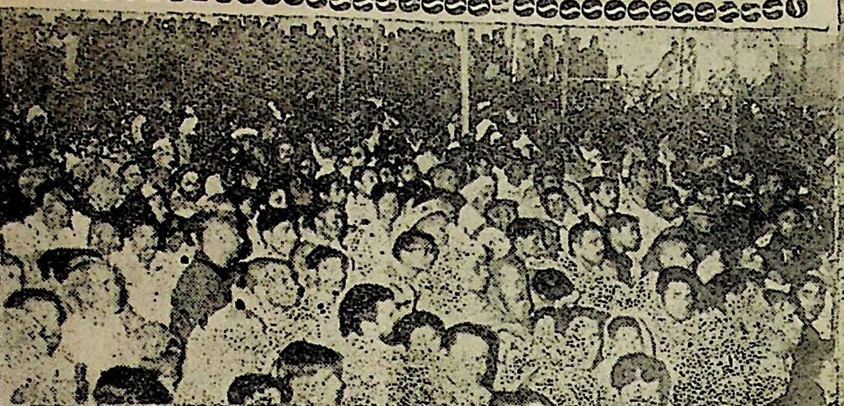
अनन्तश्री स्वामी रामदास जी महाराज



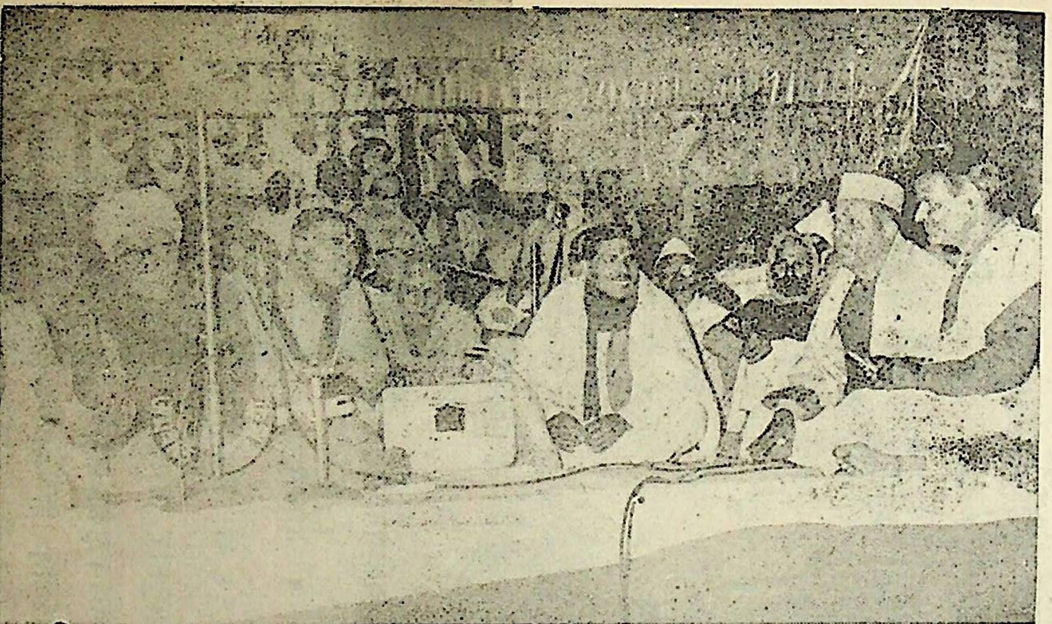
अधिष्ठाता-दरबार श्री पिण्डोरी धाम, गुरदासपुर (पंजाब)

विशेष परिचय पृष्ठ ७६ पर

सनातनधर्म विजय महोत्सव काशी



शङ्कासमाधान सम्मेलन का उद्घाटम [करते हुये पुरीपीठाधीश्वर और सामने पगड़ी बांधे शास्त्रार्थमहारथी जो समाधान करने को प्रस्तुत दीख पड़ते हैं।

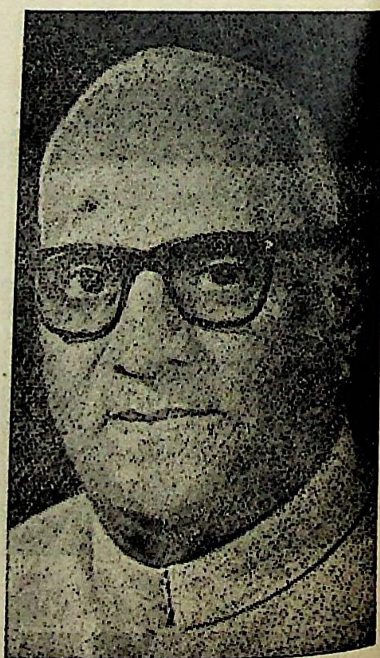


शास्त्रार्थ का एक दृश्य

पं० रुद्रदत्त आर्योपदेशक (दांये अन्तिम) ने जब यह स्वीकार किया कि 'मूर्ति में भगवान् है' तब मंचस्थ सभी विद्वान् साश्चर्य दृष्टिसे उन्हें देख रहे हैं। अग्रिम पंक्ति में बांए से क्रमश:) बैठे श्री माधवाचार्य जी श्री प्रेमाचार्य जी और श्री वीराचार्य जी हंस रहे हैं।



विश्वाराध्य
श्री वेङ्कटेश भगवान्



भारत गणतन्त्र के वर्तमान राष्ट्रपति

श्री वी० वी० गिरि

२४ अगस्त १९६९ को जिन्होंने शास्त्र विधि के अनुसार भगवान् श्री वेङ्कटेश की विशेष पूजा करके वेद मन्त्रों की ध्वनि के साथ राष्ट्रपति पद ग्रहण किया ।

काशी शास्त्रार्थ विजयोपलक्ष्ये

श्रीमन्माधवाचार्य प्रशस्तिः

—कविरत्न श्री पं० प्रभुदत्त स्वामी साहित्याचार्य (मेरठ)

सततं कृतसुरकार्यः, समितिषु बहुशः पराजितानार्यः ।
जयति स शिरसा धार्यः श्रीलः श्रीमाधवाचार्यः ॥ १ ॥

श्रुतिमूलः स्मृतिशाखः पुराणपत्रः सनातनो वृक्षः ।
तव वागमृतनिषेकं प्राप्यैव प्राणितीवोर्व्याम् ॥ २ ॥

आश्लिष्यति ननु कण्ठं, विलुठति हृदये, सदा स्थिता वचने ।
त्वां संगता सदा मा, स्पष्टं भो ! माधवोऽसि त्वम् ॥ ३ ॥

आचार्य ! गिरां प्रभुरसि, या चासौ मा धवोऽसि तस्यास्त्वम् ।
उभयोः पतिरसि, तत्ते सिद्धा भूयोऽपि माधवता ॥ ४ ॥

प्रथितं खलु, वागिषुभिर्हततर्काश्वान् मनोरथान् भंक्त्वा ।
प्रतिपक्षिणां निरासैः, शास्त्रार्थमहारथत्विं ते ॥ ५ ॥

अनुकूलेष्वनुकूलो, विपरीतानां कृतेऽसि विपरीतः ।
एके माधवमाप्ता, मा वधमाप्ता परेषान्तु ॥ ६ ॥

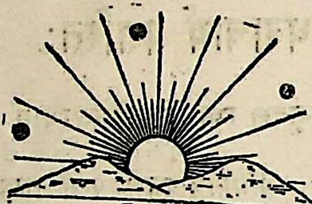
गुरुरसि यशसा, गुरुरसि वपुषा, गुरुरसि गिरां गरिम्णाऽपि ।
न हि नाम्नैवाचार्यो, गुरुरसि गुरुभिर्गुणैर्नूनम् ॥ ७ ॥

प्रायो विद्वान् लोके परोपदेशैर्मनांसि रञ्जति ।
उपदिष्टन्तु भवान् स्वं धर्मं स्वयमाचरञ्जयति ॥ ८ ॥

निजपूज्यानां तीर्मूर्मूर्त्तेर्विमुखा विपक्षिणो विद्वन् ।
तव युक्तिभिर्विमूढा यदि परमर्चन्त्युपानद्भिः ॥ ९ ॥

कथमिव तव गुणगरिमा गुणि-गण-गौरव ! गीयतां सांगः ।
सिन्धोस्तरंगभंगाः शक्यन्ते केन संख्यातुम् ॥ १० ॥

शतं समाः खलु जीव्याः प्रब्रूयास्त्वं शतं समाः श्रूयाः ।
दृश्याः शतं समास्त्वं माधव ! भूयः शताच्चापि ॥ ११ ॥



सामूहिक विजय ध्वज गान

(आदिम पाँच पद्य सदा सर्वदा गाने योग्य है---सम्पादक)

जय दुर्मत-मर्दिनी पताका !
श्वेत शान्ति सूचक रंग वाली,
दुर्मत महिष मर्दिनी काली ।
मध्य भाग में सुन्दर शोभित,
उदित सूर्य्य की स्वर्णिम लाली ।।
असुर वंश विध्वंस हेतु तू प्रलयकारिणी वह्निशलाका ।
जय दुर्मत मर्दिनी पताका ।।१।।

'केतुं कृण्वन्' वेद उक्ति तू,
मुक्तामणि जय-जनक शुक्ति तू ।
अमित अभ्युदय निःश्रेयस-प्रद,
साधक जन की भुक्ति मुक्ति तू ।।
नष्ट हुवा वह जिस पापी ने क्रूर दृष्टि से तुझ को ताका ।
जय दुर्मत मर्दिनी पताका ।।२।।

राम कृष्ण की तू अति प्यारी,
शिव प्रताप गोविन्द बलिहारी ।
तब तब सबने तुझे उठाया,
जब जब पनपे अत्याचारी,
'यदा यदा ही धर्मस्य' यह सत्य वचन भगवद्गीता का ।
जय दुर्मत मर्दिनी पताका ।।३।।

शंकर ने जब तुझे उठाया,
बौद्धवाद का किया सफाया।
वेद विरोधी दुष्ट मतों को,
एक-एक को मार भगाया॥
भूप सुधन्वा की तोपों का दिशि-दिशि प्रस्फुट हुआ धमाका।
जय दुर्मत मर्दिनी पताका॥४॥

रामानुज की अर्चा नीति,
श्री बल्लभ की पोषण प्रीति।
माध्व और निम्बार्क विष्णु की,
सेवक-सेव्य-भाव की रीति॥
गोरख रामानन्द, सूर, तुलसी, श्री चन्द्रादिक की राका।
जय दुर्मत मर्दिनी पताका॥५॥

× × ×

कलुषित कलि भारत में आया,
दयानन्द का रूप बनाया।
उलटे अर्थ किये वेदों के,
'मिथ्या-अर्थ-प्रकाश' बनाया॥
आर्यसमाज नाम पाखण्डी दम भरता है वैदिकता का।
जय दुर्मत मर्दिनी पताका॥१॥

खाकर उग्र भांग का गोला,
काशी में आ पाया रौला।
ताराचरण, विशुद्ध, बाल ने,
खूब पिलाया कोका कोला॥
प्रतिमा पूजन देख वेद में स्तम्भित हो रह गया अवाका।
जय दुर्मत मर्दिनी पताका॥२॥

माधव नें फिर तुझे उठाया,
हैदराबाद में रंग दिखाया।
बुद्धदेव से भरी सभा में,
स्वामी पर जूता लगवाया ॥
नष्ट देव की भ्रष्ट समर्चा से समाज में मच गया साका।
जय दुर्मत मर्दिनी पताका ॥३॥

एक शती के बाद समाजी,
करें व्यर्थ में हल्लाबाजी।
करपात्री जी जगद्गुरु सब,
काशी विद्वत् सभा विराजी ॥
दयानन्द दल दहल गया जब देवगिरा का लगा ठहाका।
जय दुर्मत मर्दिनी पताका ॥४॥

इन्द्रदेव पुस्तकें टटोले,
रुद्रदत्त बेमतलब बोले।
'मूर्ति में भगवान् मान्य है',
स्वयं घोषण की मुंह खोले ॥
आर्य मंच पर पहुँचे माधव पुलिस शरण ले बचे बराका।
जय दुर्मत मर्दिनी पताका ॥५॥

अभिमानी पाखण्डी हारे,
धर्म सनातन के जय नारे।
माधव प्रेम सहित हर्षित हो,
विश्वनाथ जय घोष उचारे ॥
नास्तिक दल के वक्षःस्थल पर फहराई थी विजय-पताका।
जय दुर्मत मर्दिनी पताका ॥६॥

सनातनधर्म विजय महोत्सव में हुये—

पत्र व्यवहार का सार

(अनावश्यक पुनरुक्तियों को छोड़कर पत्रोक्त अविकल शब्द ही उद्घृत किये गये हैं)

सनातन धर्म की ओर से द्वितीय पत्र

स—६०२१ २३/१२/६६

सविधे, श्री महेन्द्र प्रताप शास्त्री
आर्य समाज मन्दिर, बुलानाला, वाराणसी।

प्रिय महोदय,

आपको एक पत्र दिनांक २२ दिसम्बर को कल भेजा गया था, जिसका उत्तर अभी तक प्राप्त नहीं हुआ। हम यह चाहते है कि विचार विनिमय की दृष्टि से आपकी ओर से अधिकृत व्यक्ति शास्त्रार्थ के लिये यहां पधारना चाहें, तो सौहार्दपूर्वक उन के साथ विचार विनिमय करने (शास्त्रार्थ) के लिये हम लोग तैयार हैं।

निवेदक—राधेश्याम खेमका मंत्री

उत्तर न मिलने पर पुनः तृतीय पत्र

सं० १ ४-६६ ता० २५-१२-६६

प्रिय महोदय,

आपको शास्त्रार्थ के सम्बन्ध में कई पत्र पूर्व में दिये जा चुके हैं पर अभी तक कोई उत्तर नहीं प्राप्त हो सका। समाचार पत्रों में यह समाचार पढ़कर कि आप शास्त्रार्थके लिए अपने पंडाल में प्रतीक्षा कर रहे हैं आश्चर्य हुआ। हमारे विद्वान् सौहार्दपूर्ण ढंग से शास्त्रार्थ करने के लिए उत्सुक हैं। आज तीन दिन बीत रहे हैं परन्तु अभी तक आपकी ओर से अधिकृत कोई भी विद्वान् नहीं पधारे।

(१) शास्त्रार्थ के पूर्व एक मध्यस्थ का निर्वाचन आवश्यक है क्या आप इसके लिए प्रस्तुत है ?

(२) सनातन धर्म विजय महोत्सव के पंडाल में हम "मूर्तिपूजा एवं अवतारवाद" के सम्बन्ध में शास्त्रार्थ के लिए आपके द्वारा अधिकृत विद्वानों को आमन्त्रित करते हैं।

भवदीय—प्रधान मंत्री
विजय महोत्सव समिति, वाराणसी

नोट—चार पत्र लिखनें पर चार दिन के बाद आर्य समाज नें नीचे लिखा उत्तर दिया।

आर्यसमाज का उत्तर

सं० सी—१११६ दि० २५ दिसम्बर १९६९

सेवा में,
श्रीमान् राधेश्याम जी खेमका,
मंत्री, सनातनधर्म विजय महोत्सव समिति, वाराणसी।

श्रीमन् महोदय, नमस्ते।

आपके क्रम सं० १०२ दिनांक २३-१२-६९ तथा क्रम सं० १०४-६९ दिनांक २५-१२-६९ दोनों ही प्राप्त हुए। शास्त्रार्थ के लिए सुविधापूर्ण पंडाल की व्यवस्था डी० ए० वी० कालेज के प्रांगण में की हुई है। हम शास्त्रार्थ के आह्वान को स्वीकार करनें वाले विद्वानों की गत तीन दिनों से यहां प्रतीक्षा कर रहे हैं।

(१) निश्चित रूप से शास्त्रार्थ से पूर्व किसी मध्यस्थ का निर्वाचन आवश्यक है, जिसका निर्णय दोनों पक्ष मिल कर लेवें।

भवदीय—महेन्द्र प्रताप शास्त्री
(संयोजक मंत्री) काशी शास्त्रार्थ शताब्दी समिति

सनातन धर्म का चतुर्थ पत्र

सं० १०५-६६ ता० २५-१२-६६

प्रिय महोदय,

आज अपराह्न में आपका पत्र प्राप्त हुआ। आपने हमारे पत्र के उत्तर में लिखा है हम शास्त्रार्थ के आह्वान को स्वीकार करने वाले विद्वानों को गत तीन दिनों से यहां प्रतीक्षा कर रहे हैं किन्तु, इस सम्बन्ध में आपका कोई आमंत्रण प्राप्त नहीं हुआ। फिर भी सनातन धर्म के कुछ विद्वान् आज आपके पंडाल में शास्त्रार्थ करने गये थे, आपके पंडाल में उन्हें बोलने का समुचित समय प्राप्त नहीं हुआ और न आपके व्यवहार से उन्हें संतोष ही हुआ जबकि गत २३ दिसम्बर को आप के प्रचार मंत्री श्री विश्वश्रवा जी जब यहां पधारे थे, उनको इच्छानुसार बोलने का अवसर दिया गया और यहां सोहार्दपूर्ण ढंग से उसे सुना गया।

आप से साग्रह अनुरोध है कि आप अपने विद्वानों को शास्त्रार्थ करने के निमित्त सनातन धर्म के पंडाल में भेजने का कष्ट करें।

भवदीय,

प्रधान मंत्री विजय महोत्सव

आर्यसमाज का द्वितीय पत्र

सं० ११२० दि० २६-१२-६६

श्रीमन्नमस्ते,

आपका कृपा पत्र सं०]११२० तिथि २५-१२-६६ मिला। पत्रोत्तर में क्रमशः निम्न निवेदन है।

१. हमारा शास्त्रार्थ का आह्वान ही नियमानुसार आपके लिये निमंत्रण था और है। २. कल हमारे पण्डाल में जो श्री प्रेमाचार्य जी यहां आये थे हमने उन्हें समय दिया। तिगुने समय तक विषय के बाहर वे बोलते रहे। वह हमारे यहाँ टेप रिकार्ड है।

संयोजक—

काशी शास्त्रार्थ शताब्दी समिति

नोट—हमने आर्य समाज के प्रथम पत्र का उत्तर उसी दिन दे दिया था परन्तु आर्यसमाज समय टालने के लिये चोबीस घण्टे बाद उत्तर दे रहा है।

सनातन धर्म का पञ्चम पत्र

सं. १०६/६६ दि. २६-१२-६६

प्रिय महोदय,

आपका एक पत्र (सी-११२०) दि. २६-१२-६६ को प्राप्त हुआ। कल श्री प्रेमाचार्य जी आपके मंच पर शास्त्रार्थ के लिये गये थे, उस संबन्ध में जो बातें आपने लिखीं, उसमें तथ्य नहीं है। उन्हें उनको आवश्यकतानुसार समय नहीं दिया गया और आपकी सभाकी कार्यवाही समाप्त कर दी गयी। जबकि आज आपके जो प्रतिनिधि यहां आये, उन्हें पर्याप्त समय दिया गया, जिसे वे भी स्वीकार करेंगे।

दो तटस्थ सज्जन शास्त्रार्थ के लिये सत् प्रयास करते हैं। हम उनके द्वारा यह पत्र भेज रहे हैं। आप स्थान, मध्यस्थ, और समय आदि के सम्बन्ध में उनसे पूरी बात करके अपना निश्चय भेजने की कृपा करें।

भवदीय—राधेश्याम खेमका

आर्यसमाज का तृतीय पत्र

पत्रांक सं. सी ११२७ दि. २७-१२-६६

प्रिय महोदय,

आपका पत्र आज दोपहर में प्राप्त हुआ। श्री प्रेमाचार्य जी को अधिक से अधिक समय दिया गया। जो बातें इस विषय पर हमने पूर्व पत्र में लिखीं, वे सत्य हैं। अन्य आवश्यक व्यवस्थाओं के विषय में आज रात्रि ७ से १० बजे के मध्य वार्तालाप के हेतु आप अपने प्रतिनिधियों को भेजने का कष्ट करें। जिससे योजना को अंतिमरूप दिया जा सके।

मंत्री—

काशी शास्त्रार्थ शताब्दी समिति

सनातन धर्म का षष्ठ पत्र

सं. १०८/६६ दि. २७-१२-६६

आपका दिनांक २७-१२-६६ का पत्रांक सी-११२७ का उत्तर में संलग्न

लिखे नियम भेजे जा रहे हैं। उन्हें स्वीकार करते ही तुरन्त शास्त्रार्थ का प्रबन्ध कर लिया जाय।

मन्त्री
विजय महोत्सव

शास्त्रार्थ के नियम

१. दोनों पक्षों के शास्त्रार्थी समान आसन पर समान ध्वनि-विस्तारक आदि से सम्पन्न होंगे।

२. शास्त्रार्थ संस्कृत में लेखबद्ध होगा। दोनों पक्ष के लेखक बीस मिनटमें अपना लेख सभा स्थान में लिखेंगे। और तत्काल जनता को उसका शब्दार्थ हिन्दी में सुना देगें। इसी प्रकार दूसरे पक्ष के वक्ता को उतने ही समय में अपना वक्तव्य लिखना और पढ़ना होगा।

३. लेखक और वक्ता एक ही व्यक्ति रहेगा, अनेक व्यक्ति नहीं। अन्य लोग प्रमाणादि जुटाने की सहायता कर सकेंगे।

४. दोनों पक्षों की ओर से तीन-तीन बार पक्ष-प्रतिपक्ष के लेख जायेंगे।

५. प्रतिदिन एक ही मंच पर पूर्व आर्यसमाज द्वारा घोषित 'मूर्तिपूजा' विषय पर शास्त्रार्थ होगा। और तदनन्तर तभी सनातनधर्म द्वारा घोषित 'दयानन्द कृत ग्रन्थ वेद विरुद्ध हैं', इस विषय पर शास्त्रार्थ होगा।

६. कोई तटस्थ व्यक्ति शास्त्रार्थ का निर्णायक मध्यस्थ होगा। यदि आर्यसमाज इसे स्वीकार न करे तो दोनों पक्षों के एक-एक अपने-अपने व्यक्ति समयादि निर्णायक होंगे, और एक तीसरे व्यक्ति साक्षी रूप में दोनों के मध्य में नियम, समय आदि के नियामक रहेंगे।

७. प्रत्येक लेख की तीन-तीन प्रतियां कार्बन पेपर द्वारा लिखी जाकर एक अपने पास, एक प्रतिपक्षी को और एक मध्यस्थ को दी जायेगी। मध्यस्थ उसकी प्रमाणित प्रतियां समाचार-पत्रों को प्रदान करेंगे।

८. सभा-स्थान, बिछावन, प्रकाश, ध्वनि-यन्त्र आदि पर जो व्यय होगा वह दोनों पक्षों को आधा-आधा देना होगा।

९. केवल वेद के ही प्रमाण लिए और दिए जायेंगे। ग्रन्थान्तर के प्रमाण देने वाला पराजित समझा जाएगा। साथ ही गाली और अपशब्द का प्रयोग करने वाले भी पराजित समझे जायेंगे।

आर्यसमाज का चतुर्थ पत्र

सं० सी—११२८ दिनांक २७-१२-६९

प्रिय महोदय,

आपका पत्र सं० १०८-६९ तिथि २७-१२-६९ शास्त्रार्थ नियमों की एक प्रति के साथ प्राप्त हुआ। तदर्थ धन्यवाद। उत्तर में निवेदन है कि शास्त्रार्थ लेखबद्ध न होकर मौखिक होना चाहिये। ताकि जनता उसको साथ साथ सुनती रहे। शास्त्रार्थ राष्ट्र भाषा हिन्दी में होना चाहिये, जिससे जनसाधारण समझ सके। अतः इन नियमों में से नियम सं० दो के स्थान पर हमारे इस निवेदन को यदि आप स्वीकार करते हों तो शास्त्रार्थ आयोजित करनें में हमें कोई आपत्ति नहीं होगी और हम आपके हमारे यहां पधारने पर नियम सं० १ में वर्णित सभी व्यस्था कर सकेंगे। इस स्थिति में नियम सं० ३ में से 'लेख' शब्द के हट जाने पर शेष नियम स्वीकार होगा।

नियम सं० ४ में से भी लेख शब्द निकाल कर 'वक्ता' बोलेंगे ऐसा लिखा जाना आवश्यक है।

नियम सं० ५ के सम्बन्ध में हमारा निवेदन है कि शास्त्रार्थ का आह्वान क्योंकि हमारी ओर से हुआ है और उसके लिए मूर्तिपूजा और अवतारवाद का आधार चारों वेदों में नहीं है, यह विषय हमने उद्घोषित किया हुआ है। अतः इस अवसर पर इसी विषय पर शास्त्रार्थ हो सकता है। जिसमें पूर्व पक्ष आर्यसमाज का और उत्तर पक्ष आपका होगा।

नियम सं० ६ के बारे में हमने निवेदन किया था कि आप हम से मिलकर तय कर लें कि वह एक अथवा तीन व्यक्ति कौन होंगे, परन्तु प्रतीक्षा

करने पर भी आप अथवा आपके प्रतिनिधि नहीं पधारे। वैसे सिद्धान्त रूप में हमें इसमें कोई आपत्ति नहीं है। और हम श्री कालूलाल श्रीमाली कुलपति हिन्दू विश्वविद्यालय वाराणसी को मध्यस्थ मानने को तैयार हैं।

नियम सं० ७ यदि शास्त्रार्थ हिन्दी भाषा में तथा मौखिक होना हैं, तो इसकी कोई आवश्यकता नहीं है। यह किया जा सकता है कि दोनों पक्षों का वक्तव्य टेप रिकार्ड कर लिया जाय।

नियम सं० ८ के सम्बन्ध में कहना है कि हम अब भी यही चाहते हैं कि शास्त्रार्थ हमारे यहां हो। क्योंकि शास्त्रार्थ का आवाहन हमने किया है। ऐसी दशा में सब प्रकार का व्यय हमारा होगा। परन्तु यदि आप हमारी बात को किसी भी दशा में स्वीकार करने को तैयार नहीं हैं, और शास्त्रार्थ अन्य किसी तटस्थ स्थान पर होना है, तो उस दशा में यह नियम हमें स्वीकार है। परन्तु व्यवस्था आपको करनी होगी।

नियम सं० ९ के सम्बन्ध में निवेदन है कि वेद तो स्वतः प्रमाण के रूप में ग्राह्य है ही, परन्तु प्रत्येक पक्ष की मान्यता को आधार पर उनके मान्य अन्य ग्रन्थों के प्रमाण भी साक्षी रूप में उपस्थित किये जा सकेंगे। जहां तक गाली गलौज व अपशब्द के प्रयोग का सम्बन्ध है उस सीमा तक हमें इस नियम का यह अंश स्वीकार है।

इन नियमों की स्वीकृति तथा शास्त्रार्थ का स्थान व समय की सूचना शीघ्र भेजने कृपा करें, जिससे शास्त्रार्थ कल हो सके। क्योंकि कल हमारे कार्यक्रम का अंतिम दिन है।

मंत्री—

काशी शास्त्रार्थ शताब्दी समिति

नोट—पाठक सनातन धर्म के लिखे उचित नियमों की ओर आर्यसमाज द्वारा उनके न मानने के प्रयत्न को भली-भांति मनन करें। हम संस्कृत-लेख-बद्ध शास्त्रार्थ का हिन्दी अनुवाद जनता को तत्काल सुना देने का नियम स्वयं लिख रहे हैं परन्तु फिर भी आर्यसमाज हिन्दी में मौखिक शास्त्रार्थ होने का व्यर्थ हल्ला मचा कर अपने शास्त्रार्थियों की संस्कृत की अयोग्यता

को ढांपना चाहता है तथा लेखक और वक्ता एक ही व्यक्ति होना चाहिये इस नियम को भी न मान कर वह अपने विद्वानों की अयोग्यता को स्वयं स्वीकार कर रहा है। तथा च जिन वेदों की ड्योंडी पीटता नहीं थकता शास्त्रार्थ में केवल उन्हीं वेदों के प्रमाण लेने देने के नियम को भी अस्वीकार कर रहा है।

सनातन धर्म का सप्तम पत्र

पत्रांक—१०६/६६ दि० २८-१२-६६

महोदय,

नमस्ते, आपका पत्र मिला यदि आप संस्कृत में असमर्थ हैं तो हिन्दी में ही लेख बद्ध शास्त्रार्थ के लिए तैयार हो जायं। शेष नियम वही होंगे जो हमारे कल के पत्र में लिखे हैं।

मंत्री—

नोट—क्योंकि सनातनधर्मी किसी भी मूल्य पर शास्त्रार्थ करना चाहते हैं इसलिए उनकी संस्कृत में शास्त्रार्थ न कर सकने की अनुचित बात को भी मान लेता है और हिन्दी में ही लेखबद्ध हो जाने की छूट दे देता है।

आर्यसमाज का पञ्चम पत्र

पत्रांक—शि० ११२६ दि० २८-१२-६६

प्रिय महोदय,

आपका पत्र प्राप्त हुआ,......यह बात ठीक नहीं कि हम संस्कृत में शास्त्रार्थ करने में असमर्थ है, परन्तु समय की कमी व जनता की सुविधा की दृष्टि से हमने राष्ट्र भाषा हिन्दी में शास्त्रार्थ करने को लिखा था।...... मौखिक शास्त्रार्थ को ही हम महत्व देते हैं। शास्त्रार्थ के प्रमाणीकरण के लिए उसे टेप रिकार्ड किया जायेगा।......हम आपके ही सभा मंडप में आने को तैयार है। कल तय हुआ था कि शास्त्रार्थ आज दो बजे प्रारम्भ होना चाहिए। यदि यह आपको स्वीकार हो तो समय स्थान आदि की सूचना तत्काल दें।

मंत्री—

काशी शास्त्रार्थ शताब्दी समिति

नोट—यदि संस्कृत में शास्त्रार्थ करने में असमर्थ नहीं हैं तो करते क्यों नहीं ? न करने का कारण क्या है ? हिन्दी अनुवाद तो जनता को सुनाया ही जायगा। आर्य-समाज हिन्दी में भी लेख बद्ध शास्त्रार्थ करना नहीं चाहता क्योंकि लिखित सन्दर्भ होने की दशा में उसे अपनी जीत का मिथ्या हल्ला मचाने का अवसर न मिलेगा। वह केवल मौखिक होने की बात इसी लिए करता है कि इसमें मन मानी बकवास करने का पूरा अवसर मिल सकेगा तथा कही बात मुकरने तथा बिन कही बात जोड़ने की भी धांधली मचाने का मौका मिल जायगा।

सनातन धर्म का अष्टम पत्र

सं. ११ -६९ दि. २८-१२-६९

प्रिय महोदय,

आपका पत्र मिला। — —आप संस्कृत में शास्त्रार्थ करने को तैयार हैं यह बहुत अच्छी बात है। जनता को सुविधार्थ लिखित संस्कृत का हिन्दी अनुवाद सुना दिया जायेगा। टेप रिकार्ड की कोई आवश्यकता नहीं। उसके प्रामाण्य में भी सन्देह हो सकता है। आप हमारे स्थान पर आ रहे हैं यह बहुत सुन्दर बात है। आपके लिए समकक्ष स्थान का प्रबन्ध होगा। आप अभी पधार सकते हैं, हम आपकी प्रतीक्षा में यही बैठे हैं।

शेष नियम हमारे पत्र सं० १०८-६९ दिनांक २७-१२-६९ के अनुसार दोनों पक्षों के लिए मान्य होंगे।

मंत्री—राधेश्याम खेमका

आर्यसमाज का षष्ठ पत्र

पत्रांक सं०–शि० ११३० दि० २८-१२-६९

प्रिय महोदय,

आपका पत्र प्राप्त हुआ। ऐसा पता लगता है कि आपने हमारे पत्र को ध्यानसे नहीं पढ़ा और उसका भ्रमात्मक उत्तर दे दिया है। —हमने निश्चय किया है कि आज का शास्त्रार्थ हिन्दी में और मौखिक हमारे सभा मंडप में हो जावे। परन्तु कल का शास्त्रार्थ तभी होगा, जब कि आपका यहां हो जावे। क्योंकि हमारे समारोह के दर्शक बड़ी संख्या में आज चले जावेंगे।

मंत्री—काशी शास्त्रार्थ शताब्दी समिति

सनातन धर्म का नवम पत्र

सं. ११९/६९ दि. २८-१२-६९

प्रिय महोदय,

आपका पत्र प्राप्त हुआ। आपके लिखा अनुसार आपके पंडाल में हिन्दी में, तथा कल हमारे पंडाल में संस्कृत में शास्त्रार्थ करना हमें स्वीकार है परन्तु दोनों दिनों का शास्त्रार्थ लेखबद्ध होगा। यदि आप तैयार हों तो तत्काल सूचित करने की कृपा करें।

प्रधान मन्त्री

आर्यसमाज का सप्तम पत्र

सं. सी ११३१ दि. २८-१२-६९

प्रिय महोदय,

आपका पत्र मिला। शास्त्रार्थ के सम्बन्ध में हमारा अंतिम उत्तर यही है कि हिन्दी में शास्त्रार्थ मौखिक और हमारे सभा मण्डप में होगा। संस्कृत में शास्त्रार्थ लिखित और आपके मण्डप में होगा। आज दो बजे से हम आपकी प्रतीक्षा करते रहे, पर आप न पधारे। अपना अन्तिम उत्तर एक घण्टे के अन्दर स्पष्ट रूप में भेजने की कृपा करें।

मन्त्री—

काशी शास्त्रार्थ शताब्दी समिति

सनातनधर्म का अन्तिम उत्तर

सं. १४४/६९ दि. २८-१२-६९

महोदय,

आपका पत्र अभी-अभी प्राप्त हुआ। जिसके उत्तर में निवेदन है कि हमारे विद्वान् आपका पत्र प्राप्त होते ही शास्त्रार्थ के लिये आपके पंडाल में पधार रहे हैं तथा कल हम आपको अपने पण्डाल में दो बजे प्रतीक्षा करते रहेंगे। पर शास्त्रार्थ लेखबद्ध होगा।

प्रधान मन्त्री

वाराणसी में आर्यसमाज की अन्त्येष्टि

—श्री प्रेमाचार्य शास्त्री एम० ए०

जिस प्रकार मिस्टर डार्विन ने जीवन भर के विचार मन्थन के बाद निर्धारित अपने विश्व-विश्रुत विकासवाद सिद्धान्त की निस्सारता अपने जीवन काल में ही प्रकट कर दी थी उसी प्रकार स्वा. दयानन्दजी ने भी सत्यार्थ-प्रकाश आदि ग्रन्थों में प्रतिपादित अपने मन्तव्यों का मृत्यु से एक वर्ष पूर्व 'सन्ध्योपासनादि पञ्च महायज्ञ विधि' नामक अपनी अन्तिम कृति द्वारा स्वयमेव खण्डन कर दिया था। यह कृति जो १९३९ में 'नवल किशोर प्रेस' लखनऊ से उन राजा जयकृष्ण दास द्वारा छपवाई गई है, जिन्होंने कि प्रथमावृत्ति सत्यार्थ प्रकाश छपवाया था। यह सुस्पष्ट और निर्भ्रान्त रूप से स्वा.जी के विचारों की परिपक्वता का क्रमिक इतिहास व्यक्त करती है। जब तक उनका अध्ययन सीमित, चिन्तन अपरिपक्व एवं उथला तथा व्यवहार पाश्चात्य सभ्यता से प्रभावित रहा तब तक उन्होने न केवल ऊल जलूल सोचा हो अपितु वेदमन्त्रों के मनमाने अर्थ, अन्ट-शन्ट विनियोग घड़ कर वेदहत्या का जघन्य दुष्प्रयास भी किया। आध्यात्मिक अभ्युन्नति के स्रोत वेदवाङ्मय की छीछालेदड़ करके उसे भानुमती का पिटारा बना डाला। किन्तु जो हो उन्होंने अपने सारे पापों का प्रायश्चित्त अपने जीवन कालमें ही उक्त पुस्तक लिखकर कर डाला था। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि स्वा० दयानन्द जन्म से तो सनातनधर्मी थे ही मरे भी वे सनातनधर्मी होकर ही।

हमें आर्यसमाजी बन्धुओं की घासलेटी अकल पर तब बड़ा तरस आता है जब वे अपनें मत प्रवर्तक की मूर्खता का सरे आम डिण्ढोरा पीटते हैं। स्वा. दयानन्द 'सन्ध्योपासनादि पञ्च महायज्ञ विधि' में जब सर्व प्रथम 'श्रीगणेशाय नमः' लिखते हैं तथा 'विष्णुं शारद चन्द्र कोटि सदृशम्' आदि श्लोक बोल कर सगुण साकार भगवान् विष्णु की स्तुति करना लिखते हैं तब समझ में नहीं आता ये लण्ठ दयानन्दी किस मुंह से उस अनादि देवता

गणेश का उपहास करते हैं और मूर्तिपूजा की खिल्ली उड़ाते हैं। स्वा० दयानन्द आखिर मनुष्य थे। भ्रम प्रमादवश जवानी के जोश में यदि वे कुछ वेद तथा व्यवहार के विरुद्ध लिख ही गये थे तो यह कहाँ की बुद्धिमानी है कि उनके कठमुल्ला अनुयायी ऋषिभक्त होने का दम्भ करते हुए भी आज तक उनकी फजीहत करते चले आ रहे हैं।

खैर, इन कठमुल्ला दयानन्दियों को तो छोड़ें। कहने का तात्पर्य केवल इतना है कि वास्तव में तो आर्यसमाज उसी दिन मर गया था जब स्वा. दयानन्द ने 'सन्ध्योपासनादि पञ्च महायज्ञ विधि' पुस्तक लिखी थी। जो कमी थी वह उन शास्त्रार्थों में पूरी हो गई थी जो सनातन-धर्मी विद्वानों के साथ पिछले कुछ वर्षों से महाशयों द्वारा किये जाते रहे हैं। मुसलमान, ईसाई जैसे अहिन्दू सज्जनों ने—जो कई शास्त्रार्थों के निर्णायक मध्यस्थ रहे हैं, सुस्पष्ट शब्दों में न केवल आर्य-समाज की लज्जाजनक पराजय ही अपने निर्णयों में घोषित की हैं अपितु समाजी सिद्धान्तों को भी वेदविरुद्ध बताते हुए लताड़ा है। उन निर्णयों की स्याही भी सूख न पाई थी कि आज से सौ वर्ष पूर्व काशी में सात सनातनी विद्वानोंके साथ हुए स्वा. दयानन्द के कथित शास्त्रार्थ की आड़ लेकर उत्तर प्रदेशीय आर्य प्रतिनिधि सभा ने 'दयानन्द काशी शास्त्रार्थ शताब्दी समारोह' का हंगामा खड़ा करके एक तरह से आर्यसमाज की अन्त्येष्टि का ही उपक्रम कर डाला। सात दिन के इस समारोह में आर्य-समाज की सैद्धान्तिक और व्यावहारिक दुर्बलता शतगुणित होकर बड़े वीभत्स रूप से जग जाहिर हो गई।

यद्यपि अपनी घोषणा के अनुसार दिग्विजय पर निकले इन समाजगेहे शूरों का यह कर्तव्य था कि वे स्वयं सनातन-धर्म विजय समारोह हरिश्चन्द्र कालेज में–जो कि उनके उत्सवस्थल डी. ए. वी. कालेज से मुश्किल से डेढ़ फर्लांग की दूरी पर था, शास्त्रार्थ हेतु आते, किन्तु सनातनी विद्वानों के अहर्निश ललकारने, लिखित निमन्त्रण देने तथा १५ हजार रुपये के पुरस्कार की घोषणा करने पर भी जब किसी समाजी को सामने आने का साहस न हुआ तो हजारों की संख्या में बाहर से आए शास्त्रार्थ सुनने के उत्सुक आर्यसमाजियों ने ही आयोजकों को कोंचना शुरू कर दिया और उनका उठना बैठना तक हराम कर दिया। तब अपने ही लोगों के साथ

कट रही अपनी नाक को बचाने की दुराशा से शताब्दी समारोह के आयोजकों ने म० रामदयाल, म० रामानन्द, म० इन्द्रदेव और म० रुद्रदत्त आदि चार मिट्टी के शेरों=आर्योपदेशकों को सनातन-धर्म विजय उत्सव के मंच पर ठेल ठाल कर भेजा।]

२६ दिसम्बर को जिस समय कम्पित शरीर और विवर्णमुख ये महाशय मंच पर पहुंचे उस समय शास्त्रार्थ-महारथी श्री पं० माधवाचार्य जी का शंका समाधान हो रहा था और वे साथ २ स्वा० दयानन्द की तथाकथित वैदिकता की बखिया उधेड़ रहे थे। प्रकरण था संस्कार विधि का 'विवाह संस्कार' जिसमें स्वामीजी ने भावी वर वधू को विवाह से पूर्व ही एकान्त में जाकर नग्न होकर परस्पर एक दूसरे की मूत्रेन्द्रिय पर—'*इमं ते उपस्थं मधुना संसृजामि*' आदि मन्त्र बोलते हुये 'मधु' से सींचने का आदेश दिया है। उक्त मन्त्र का हिन्दी अनुवाद आर्यसमाजी विद्वान् श्रीरामगोपाल विद्यालङ्कार ने उक्त संस्कार विधि की टीका 'संस्कारप्रकाश' में इस प्रकार किया है—

'हे स्त्री ! में तेरे उपस्थेन्द्रिय को प्रेम से युक्त करता हूं। सन्तानोत्पत्ति का यही द्वितीय द्वार रूप है। तू इसी के द्वारा वश में न होने वाले पुरुषों को भी नीचा दिखाती है। हे घर की स्वामिनी, तू सबको वश में करने वाली है।

(संस्कार प्रकाश पृष्ठ १२३)

पण्डाल में हजारों की संख्या में सनातनी जनता उपस्थित थी जो स्वा. दयानन्द की इस निर्लज्जता-पूर्ण व्यवस्था पर जमकर कहकहे लगा रही थी और दयानन्दियों की इस खुली व्यभिचार लीला पर थू थू कर रही थी।

पुरीपीठाधीश्वर जगद्गुरु श्री शंकराचार्य महाराज ने जो उस समय सभाध्यक्ष थे, सब पुरोगम स्थगित करके इन आगन्तुक महाशयों को बोलने का खुला अवसर दिया। पहले चन्द मिनट म० इन्द्रदेव ने मनमाने ढंग से तोड़ मरोड़ करके एक दो पौराणिक कथाओं पर आक्षेप किया। कहा कि कृष्ण की तीस लाख पत्नियें थी, विष्णुने वृन्दासे व्यभिचार किया इत्यादि २ श्री शंकराचार्य जी ने उनसे कहा कि आप जिस रूप में ये कथा सुना रहे हैं वे उस रूप से किसी भी पुराण में नहीं है। आप निकाल कर दिखाइये !

इसपर महाशय जी बोले—मेरे पास ब्रह्मवैवर्त-पुराण नहीं है मैं कल लाकर दिखाऊंगा। जगद्गुरु जी ने उन्हें तुरन्त मंच पर से ही 'ब्रह्मवैवर्त-पुराण' दिलवा दिया, किन्तु वे महाशय पूरे २ घण्टे तक उस पुराण को उलटते-पुलटते रहे पर अपनी कही कथाएं उन्हें अन्त तक ढूंढने पर भी न मिल सकीं। क्योंकि उन्होंने स्वयं तो पुराण पढ़ा नहीं था केवल अनार्योचित दुराचार के कारण समाज से बहिष्कृत म० श्रीराम आर्य का मिथ्या ट्रैक्ट पढ़ा था। म० इन्द्रदेव को इस उलट पुलट में उलझा देख म० रुद्रदत्त को अवसर दिया गया। उनके और शास्त्रार्थ महारथी जी के मध्य 'आर्य समाज की अवैदिकता' विषय पर हुये तीन घण्टे के शास्त्रार्थ का सार-संक्षेप में इस प्रकार है।

इस शास्त्रार्थ के समय मंच पर श्री शंकराचार्य जी महाराज ज्योतिर्मठ, श्री स्वामी करपात्रीजी महाराज, स्वामी परमानन्दजी सरस्वती स्वा. स्वरूपानन्दजी महाराज, स्वा. आत्मदेवाश्रमजी (विदिशापीठ) तथा श्री पट्टाभिराम शास्त्री, श्री बदरीनाथ शुक्ल आदि काशी के सैकड़ों मूर्धन्य विद्वान् उपस्थित थे।

महाशय रुद्रदत्त जी

सज्जनो! आर्यसमाज केवल आर्ष वचन को प्रमाण मानता है। रामगोपाल के अर्थ को हम नहीं मानते। वह रद्दी की टोकरी में फेंक देने योग्य है। जो कुछ ये पं० जी सुना रहे हैं इसमें कोई आर्ष प्रमाण दीजिये तो मानें। आज इनका मुझसे वास्ता पड़ा है। आज मैं देखूंगा इनमें कितनी गहराई है। आर्य-समाज ही एकमात्र वैदिक धर्म का अनुयायी है। बस लगे दिखानें, रामगोपाल, रामगोपाल? रामगोपाल कोई ऋषि हैं? ऋषि दयानन्द ने यह कहाँ लिखा है। यह दिखाओ तो हम मानें।

शास्त्रार्थ महारथी जी

महानुभाव! जो प्रकरण चला हुआ है वह इतना स्पष्ट और सरल है कि साधारण बालक भी समझ सकता है। स्वा० दयानन्द जी ने 'संस्कार विधि' में 'इमं ते उपस्थं मधुना संसृजामि' यह मन्त्र लिखा है और भावी वर वधू को आदेश दिया है कि वे यह मन्त्र बोलते हुये एक दूसरे को मूत्रेन्द्रिय पर

'मधु' संसर्जन करें। मैं आर्यसमाज के ही प्रामाणिक पं. का किया हुआ मंत्रार्थ सुना रहा हूं। प्रश्न तो यह है कि क्या ऐसी भद्दी और गन्दी व्यवस्था व्यवहार संगत है। कोई भी इज्जतदार व्यक्ति क्या यह बर्दाश्त कर सकेगा कि विवाह में आए सगे सम्बन्धियों को विद्यमानता में ही कोई उसकी प्राणों से प्यारी बेटी को एकान्त में ले जाकर उक्त खुराफात करे। यह स्वा. दयानन्द की वैदिकता बनाम व्यभिचार लीला का कच्चा चिट्ठा है। (जनता में धिक्कार है धिक्कार है कि आवाज) आप श्री रामगोपाल का अर्थ नहीं मानते, मत मानिये। मैं आप से कहता हूं आप ही इस मन्त्र का अर्थ करके दिखाइये?

आप बार बार आर्ष प्रमाण को दुहाई दे रहे हैं। आर्यसमाज स्वा. दयानन्द को 'महर्षि' कहता है, मैं उन्हीं का लिखा प्रमाण दे रहा हूं। क्या आप स्वा. दयानन्द को भी नहीं मानते। कहिये, उन्होंने यह सब लिखा है या नहीं? (जनता में सन्नाटा) बोलिये, चुप क्यों हैं?

रही आर्यसमाज के वैदिक होने की बात। आपकी 'वैदिकसंध्या' का 'इन्द्रियस्पर्श मन्त्राः' शीर्षक के नीचे लिखा 'ओं वाक् वाक् चक्षुः चक्षुः' आदि मन्त्र आपके कौनसे वेद में है? 'यज्ञोपवीत परमं पवित्र' मन्त्र जिससे आप सब के गले में यज्ञोपवीत डालते हैं, वह आर्यसमाज द्वारा मान्य कौन से वेद में है? मेरा दावा है कि आर्यसमाज वैदिक होने का केवल दम्भ करता है, भोली भाली जनता को ठगने के लिये। वेद से उसका जौं भर भी वास्ता नहीं।

आप फरमाते हैं 'मैं' आपकी गहराई देखूंगा।' क्या कहने! महाशय जी! माधवाचार्य गहराई में नहीं ऊंचाई पर है (दोनों हाथ ऊपर उठाते हुये) लो पहले मेरी ऊंचाई तो देखलो। (जनता में महाट्टहास लघुकायनाटे म० रुद्रदत्त लज्जित)।

म० रुद्रदत्त दूसरी बार—

सज्जनों! मैं पुनः कहता हूं और दावे के साथ कहता हूं आर्य समाज केवल आर्ष वचन को ही प्रमाण मानता है। जो कुछ ये पं० जी फरमा रहे हैं वह महर्षि दयानन्द ने नहीं लिखा। आप हमें अवैदिक कैसे कह सकते हैं जब कि हम एक मात्र वेद को ही प्रमाण मानते हैं। आर्य-समाज अनादि

अनन्त एक निराकार ब्रह्म को ही मानता है। यह सब दृश्य ब्रह्माण्ड वही है जैसे कहा भी है—ब्रह्म सत्यं जगन्मिथ्या। वह परमेश्वर सर्वव्यापक जरूर है परन्तु उसकी मूर्ति कैसे बन सकती है जब कि वह निराकार है। आप आर्य-समाज पर झूठा आरोप लगा रहे हैं कि आर्य-समाज मूर्ति में भगवान् नहीं मानता। कौन कहता हैं? हम तो मूर्ति में भी भगवान् को मानते हैं। (सभा में भीषण करतल ध्वनि और हर हर महादेव की दिगन्त भेदी हर्ष ध्वनि। लगभग १० मिनट तक हर्ष से गद्‌गद गद्‌गद जनता जय ध्वनि करती रही तब श्रीशंकराचार्य जी ने जनताको शान्त किया। म० रुद्रदत्त खिसियाए से पुनः बोलने लगे) आप हंसते क्यों है? पहले पूरी बात सुनियें। बस! लगे हंसने। अरे! ईश्वर तो निराकार ही हैं। मैं पुनः कहता हूं उसको मूर्ति नहीं बनायी जा सकती। सज्जनों! आर्यसमाज और सनातनधर्म में फर्क ही क्या हैं? थोड़ा ही तो फर्क है बस! और मैं कोई शास्त्रार्थ करने थोड़े ही आया हूं में तो विद्वानों का मनोरंजन करने आया था। 'ओं वाक् वाक्' का उत्तर क्या मुश्किल है? अगर यह मन्त्र वेदों में नहीं है तो लक्षणा कर लेंगे कि यह विधि है. बस! अर्थ मिल जायगा। जैसे 'कुन्ताः प्रविशन्ति', छत्रिणो यान्ति, यहाँ लक्षणा करनी पड़ती है।

शास्त्रार्थ महारथी जो दूसरी बार—

महानुभाव! थे महाशय मुख्य विषय से सर्वथा असम्बद्ध बातें बोल २ कर समय बर्बाद कर रहे हैं। इन्हें दर्शन शास्त्रों का तो ज्ञान है ही नहीं ऊल जलूल बोल कर आज ये आर्य-समाज के सिद्धान्तों की भी हजामत कर रहे हैं। कहते हैं—आर्य-समाज अनादि अनन्त एक निराकार ब्रह्म को मानता है। शायद महाशय जी को ज्ञान नहीं है कि स्वा० दयानन्द ने ईश्वर जीव और प्रकृति इन तीनों तत्वों को अनादि और अनन्त मानकर त्रैतवाद के सिद्धान्त को स्वीकार किया है, चाहे ऐसा मान लेने पर ईश्वरके साथ साथ जीव और प्रकृति के भी अनादि अनन्त सिद्ध हो जाने से तथा इन दोनों के सहारे विना कोई भी कार्य करने में सर्वथा असमर्थ हो जाने से उनका निराकार परमात्मा जीव और प्रकृति रूपी दो वैसाखियों के सहारे घिसट-घिसट कर चलने वाला पंगु सिद्ध हो जाता हो।

सज्जनों! सच्चाई सात तवे फ़ोड़ कर भी प्रगट हो जाती है। जैसा

कि महाशय जी ने स्वयं स्वीकार किया है, यदि आर्य-समाज मूर्ति में भगवान् की सत्ता मानता है, फिर तो सब झगड़ा ही समाप्त है। (जनता में करतल ध्वनि)।

आप इस शास्त्रार्थ को—जब कि इस समय मंचपर काशी के अनेकों विषयों के चोटी के विद्वान् उपस्थित हैं और सारे भारत की जनता इन ऐतिहासिक निर्णयों की बड़ी उत्सुकता से प्रतीक्षा कर रही है, 'मनोरंजन' कहने का दुस्साहस कर रहे हैं। आपको अपने शब्द वापस लेने चाहियें।

आप कहते हैं सनातन धर्म और आर्य्य समाज में 'थोड़ा ही' फर्क है। मैं कहता हूं फर्क 'थोड़ा' नहीं 'बहुत' है। मन्दिर और शौचालय में जो अन्तर है वही सनातन-धर्म और आर्यसमाज में है। (सभा में हर्ष नाद) यद्यपि जरूरी दोनों हैं परन्तु उनका उपयोग अपनी २ जगह है।

आप 'इन्द्रिय-स्पर्श-मंत्राः' इस शीर्षक के नीचे लिखे 'ओं वाक् वाक्' इत्यादि सन्दर्भ में लक्षणा घुसेड़ रहे हैं अजी! सीधे क्यों नहीं कहते कि यह मन्त्र वेदों में नहीं है और दयानन्द जी का 'इन्द्रिय-स्पर्श-मन्त्राः' यह शीर्षक गलत है। द्रविड़ प्राणायाम क्यों कर रहे हैं? यह कहने की आवश्यकता नहीं कि महाशय जी ने न तो वरकन्या के मधुसंर्जन का उत्तर दिया न 'वाक् २' सन्ध्या मंत्र न यज्ञोपवीत मन्त्र दिखा सके।

प्रश्नोत्तर का निष्कर्ष

१. म० रुद्रदत्त अपनी पांचों टर्नों में एक ही राग आलापते रहे 'हम तो आर्ष प्रमाण मानते हैं।' महारथी जी जब 'संस्कार विधि' में से उक्त प्रकरण बांचकर बार २ सुनाते और पूछते कि बोलो यह स्वा. दयानन्द का लिखा हुआ है या नहीं? आर्ष प्रमाण कहते हो मैं तो 'महार्ष प्रमाण (महर्षि दयानन्द का) दे रहा हूं' तब महाशय जी की सिट्टी गुम हो जाती और जनता तुमुल करतलध्वनि से सनातनधर्म का जयघोष करती।

२. जब 'ओं वाक् वाक्' का कोई उत्तर देते महाशयों से न बना और पुनः पुनः 'यह मन्त्र नहीं है यह तो विधि है' चिल्लाने लगे तब महारथी जी ने पूछा कि अच्छा मान लो यह मन्त्र नहीं है इन्द्रिय स्पर्श करने की विधि है परन्तु इसी मन्त्र में आगे 'नाभिः नाभिः' आता है। यह नाभि कौन

सो इन्द्रिय है ? पांच ज्ञानेन्द्रिय, पांच कर्मेन्द्रिय और मन सहित ग्यारह इन्द्रिय तो सभी पण्डित जानते हैं। क्या स्वा० दयानन्द ने 'नाभि' को बारहवीं इन्द्रिय माना है। अथवा 'नाभि' शब्द लाक्षणिक है। जैसे गंगाया घोषः' कहने से गंगा के अत्यन्त निकटवर्ती तट में लक्षणा की जाती है वैसे ही क्या यहां भी 'नाभि' से उसके अत्यन्त निकटवर्ती इन्द्रिय विशेष '.......' में स्वामी जी ने लक्षणा मानी है ? (जनता में अट्टहास)

३. महाशय जी बार २ बड़े अशिष्ट ढङ्ग से अपनी ओर इशारा करते हुए कहते थे—पहले मुझ जैसे पण्डितों से पढ़ो, जानते हो मैं कौन हूं। महारथी जी ने अपनी टर्न में उनकी इस गर्वोक्ति को उर्दू के निम्न शेर से चूर चूर कर दिया—

हम खूब जानते हैं बुलबुल तेरी हकीकत।
एक चोंच है जरा सी दो पर लगे हुये हैं॥

वेद शास्त्रों के गरिष्ठ प्रमाणों के बीच इस फड़कते हुये शेर को सुनकर जनता आनन्द विभोर हो उठी।

४—महाशय जी बीच बीच में आर्य समाज के वैदिक होने का दम्भ प्रकट करते थे। इस पर महारथी जी ने कहा कि आर्य समाज वेदों से कोसों दूर एक अर्धनास्तिक मत है। वह ईश्वर को सर्व शक्तिमान् मानते हुए भी 'अवतार' लेने की शक्ति से रहित कहता है। जब आर्य समाज ईश्वर को सर्व व्यापक मानता है तो वह ईश्वर पाषाण की मूर्ति में क्यों नहीं हैं ? यदि ईश्वर मूर्ति में नहीं है तो समाजियों का ईश्वर सर्वव्यापक नहीं हो सकता। इस पर महाशय जी बौखला उठे। इस जाल में ऐसे उलझे कि जब और कुछ न सूझा तब घबराहट, बौखलाहट, खीझ, विवशता और झुंझलाहट में आकर हाथ उठाकर बोले—कौन कहता है आर्य-समाज मूर्ति में भगवान् नहीं मानता ? वह मूर्ति में भी भगवान् को जरूर मानता हैं। महाशयजी के मुखसे इन शब्दों का निकलना था कि जनता ने तुमुल करतल ध्वनि और 'हर हर महादेव' के दिगन्त व्यापी जयघोष से पण्डाल को गुंजा दिया। काशी नगरी के अधीश्वर भगवान् विश्वनाथ ने स्वयं महाशय के मुख से १० हजार की विशाल जनसभा में उक्त शब्द कहलवा कर एक चमत्कार ही कर दिखाया था।

शास्त्रार्थ के बाद का दृश्य

म० रुद्रदत्त के मुख से निकले (मूर्ति में भगवान्) इन शब्दों ने आर्य-समाज की अन्त्येष्टि कर डाली। समागत समाजियों में आपस में ही ले-दे शुरू हो गई। म० रामदयाल और म० रामानन्द आर्योपदेशक तथा अन्य कुछ समाजी जो आर्य-समाज की इस लज्जाजनक पराजय को सहन न कर सके चुप चाप सभा से खिसकने लगे। कुछ लड़ने झगड़ने पर उतारू हो गये। एक काली टोपी वाला लाला टाइप का समाजी आपे से बाहर होकर अनाप शनाप मंच पर खड़े २ ही बकने लगा—कोई यह अर्थ दिखादो। मैं एक लाख दूंगा। वह आवेश में भरकर जब २ खड़ा होकर चिल्लाता था तब २ हर बार उसकी धोती की लांग खुल-खुलकर नीचे लटक जाती और उधर जनता हंस-हंस कर लोट पोट हुई जा रही थी।

अन्त में शास्त्रार्थ के निर्णायक-मध्यस्थ पुरीपीठाधीश्वर जगद्गुरु शंकराचार्य स्वा० निरञ्जन देव तीर्थ ने समागत महाशयों से कहा अन्य कुछ बोलना चाहें तो आगे समय दिया जाय परन्तु जब वे आगामी कल को डेढ़ बजे तैयार होने की बात कहकर जाने को उद्यत हो गये तब शास्त्रार्थ का निर्णय सुनाया, जो स्थानीय समाचार पत्रों में भी प्रकाशित हुआ वह निम्न प्रकार से है।

मूर्ति में भगवान् प्रमाणित

वाराणसी में सनातन-धर्म विजय महोत्सव सम्मेलन में पुरी पीठ के जगद्गुरु शंकराचार्य श्री स्वामी निरंजन देव तीर्थ जी ने घोषणा की कि शास्त्रार्थ में श्री माधवाचार्य जी अपने पक्ष को प्रमाणित करने में सफल हुये हैं। जगद्गुरु शंकराचार्य जी अपना निर्णय दे रहे थे। उन्होंने कहा कि आर्यसमाज के प्रतिनिधि श्री रुद्रदत्त शास्त्री ने यह स्वीकार कर लिया कि मन्दिर की मूर्ति में भगवान् है। उन्होंने आगे कहा कि शास्त्रार्थ में आर्य समाज की यह करारी हार पूर्ण काशी की विजय है।

(स्वतन्त्र भारत, लखनऊ २८-१२-६९)

सनातनी विजयी

सनातनधर्म विजय महोत्सव की कल की सभा में हुए शङ्का समाधान पर अपना निर्णय देते हुए पुरी के जगद्गुरु शँकराचार्य श्री निरंजन देव तीर्थ ने कहा कि शास्त्रार्थ में आर्यसमाज की करारी हार हुई और माधवाचार्य जी अपने पक्ष को प्रमाणित करने में समर्थ हुए। आर्य समाज के प्रतिनिधियों ने करतल ध्वनि और हर हर महादेव के उद्घोष के बीच यह स्वीकार किया कि मन्दिर की मूर्ति में भगवान् है।

'गांडीव' काशी २९-१२-६९

हथियाराम मठ के महामण्डलेश्वर श्री विश्वनाथ यतीजी ने उक्त अवसर पर(श्री पं० माधवाचार्य शास्त्री को विजयोपलक्ष में एक सौ पच्चीस रुपया तत्काल पुरस्कार प्रदान किया और भविष्य में जब कभी भी वे वाराणसी पधारें यावज्जीवन इतना ही पुरस्कार सदैव देते रहने की घोषणा की एवं) यह घोषणा भी की कि आर्य समाज का बड़े से बड़ा विद्वान् आए और यह सिद्ध करे कि मूर्तिपूजा वेद विरुद्ध है तो वह उसे दश हजार रुपयें का पुरस्कार देंगे।

—०—

धर्मो जयति नाधर्मः

—श्री वीराचार्य एम० ए०

अजबशोर सुनते थे पहलू में दिल का।
जो चीरा तो एक कतरा-ए खूं न निकला।

यात्रायें तो बहुत की हैं बहुत करनी है किन्तु अब की बार की यात्रा जीवन की अविस्मरणीय, स्वर्णिम पृष्ठों में हीरकाक्षरों से उल्लेखनीय कही जा सकती है। भगवान् भूतभावन विश्वनाथ की काशी का ये साप्ताहिक प्रवास, प्रवास को जीवन्त स्मृतियां, स्मृतियों का तीखा पन और तीखेपन में असत्य तथा अवैदिक कपोल कल्पना को वैदिक, सत्य और केवल सत्य कहने का विद्वेष दम्भ रह रह कर साकार हो उठता है। राम नाम की कलि-कलुष विनाशिनी ध्वनि को भी प्रायश्चित्तार्ह एवं हर हर महादेव के

राष्ट्रीय उद्घोष को त्याज्य घोषित करने वाले 'आर्य'-तथा कथित 'आर्य' अनार्यों से भी कहीं अधिक हानिकारक हो सकते है ये प्रत्यक्ष देखने को मिला। 'हिन्दू' के सामने अपने कहे जाने वाले भो इतना अराष्ट्रीय दृष्टि कोण लेकर आजकी विषय स्थिति में खड़े होंगे ये कल्पना का नहीं अनुभूति का विषय बन गया है।

'काशी शास्त्रार्थ शताब्दी' के नाम से आयोजित वाराणसो में होने वाले सम्मेलन में आर्य-समाजी बन्धुओं ने डिंडिमघोष के साथ शास्त्रार्थ के लिए सनातन धर्म को मुहुर्मुहु ललकारा। किन २ अपमानों का हाला हल पीकर भो महादेव के अनुयायिनों नें सामाजिक 'शिव' को ध्यान में रखकर इस 'अकाण्ड ताण्डव' को रोकने का अथक प्रयत्न किया। ये इसी विशेषांक के पृष्ठों में अन्यत्र उल्लिखित है, किन्तु दुष्प्रचार का विष अन्दर अन्दर घोलने को चाल में पटु कुछ तथा कथित पत्रकार बन्धु घटनाओं को विकृत रूप में जनता जनार्दन के समक्ष प्रस्तुत न कर सकें एतदर्थ एक प्रत्यक्षदर्शी के नाते २५ दिसम्बर ६९ को घटित होने वाली एक घटना का विवरण प्रस्तुत है।

न सही शास्त्रार्थ, कम से कम शंका समाधान के रूप में हो विचार विनिमय हो सके। 'मैदान खाली रहेगा कितनी ही डींग हांको' इस अतर्कित सम्भावना वश शास्त्रार्थ शास्त्रार्थ का प्रलाप करके जब लगभग उत्सव के आधे दिन योंहो आर्य-समाज की ओर से बिता दिये गये तो सौहार्द पूर्ण वातावरण में शंका समाधान के नाम पर ही जनता को वस्तुस्थिति एवं एवं दयानन्दियों की सैद्धांतिक दुर्बलता का, अवैदिकता का, अदार्शनिकता का अथ च अव्यावहारिकता का भान हो सके एतदर्थ शास्त्रार्थ पंचानन प्रेमा चार्य एम. ए. अपने सहयोगी विद्वानों सहित २५ दिस. ६९ को आर्य-समाज के सभामण्डप में जा पहुंचे। अनेक श्रोताओं तथा विद्वानों के अतिरिक्त लेखक स्वयं मंच पर उपस्थित था आर्य भजनोपदेशक महाशय विद्यानन्द जी सभ्यता को सर्वथा तिलांजलि देकर अनन्त श्री विभूषित करपात्री जी महाराज तथा अन्य सनातन धर्मी सन्तों विद्वानों को अपशब्दों से सम्बोधित करते हुये कह रहे थे कि 'लाओ, कहां है करपात्री, वह बताये तो आकर कि यदि महर्षि दया० न होते तो कौन आप सबको ईसाई बननेसे रोकता।'

श्री प्रेमाचार्य ने मंच प्रबन्धक और शताब्दी के संयोजक श्री महेन्द्र

प्रताप शास्त्री तथा मंच पर उपस्थित संसद् सदस्य श्री प्रकाशवीर शास्त्री आदि से बोलने के लिये कुछ समय मांगा क्योंकि इससे एक दिन पूर्व ही महाशय विश्वश्रवा (शताब्दी उत्सव के प्रचार मंत्री) सनातन धर्म विजयोत्सव के मंच पर आकर स्वतन्त्रता पूर्वक अपने विचार व्यक्त कर चुके थे। पूर्व निर्धारित कार्यक्रम को स्थगित करके भी उन्हें यथच्छ समय दिया गया था। किन्तु पर्याप्त 'ननु नच' किन्तु परन्तु के बाद महाशय महेन्द्र प्रताप जी ने ध्वनि विस्तारक यन्त्र पर सूचना दी कि पांच मिनट के लिये श्री प्रेमाचार्य अपनी शंका के सम्बन्ध में कुछ कहेंगे।'

पूर्ण शालीनता के साथ सुस्पष्ट शैली में प्रेमाचार्य जी ने अध्यक्ष महोदय को सम्बोधित करते हुये अपना वक्तव्य प्रारम्भ किया अपशब्दों की परम्परा में पले व्यक्तियों से इससे अधिक आशा भी क्या हो सकती है कि विश्वबन्द्य करपात्री जी जैसे महात्माओं को भी अभद्र वाणी में स्मरण करें। रही बात ईसाई बनने से रोकने की तो आर्य-समाज का ये दावा भी सर्वथा थोथा है। स्वयं स्वामी दयानन्द सरस्वती अपनी शिष्या रमाबाई को ईसाई बनने से न रोक सके स्वामी श्रद्धानन्द के ज्येष्ठ पुत्र हरिश्चन्द्र ईसाई बन गये, उन्हें क्यों नहीं रोका जा सका। वस्तुतः वेद का नाम लेकर दयानन्दजी ने ईसाई तथा मुसलमान बननेका मार्ग खोल दिया सत्यार्थ प्रकाश के द्वितीय समुलास में लिखा है—यदि गर्म देश हो तो शिखा सहित मुण्डन करवा दिया जाय। स्वामीजी ने वेद के किस मन्त्र के आधार पर ये लिखा है? जिस शिखा के लिये हिन्दू शताब्दियों तक संघर्ष करते रहे उसी को वेद के नाम पर कटवाने को आज्ञा मिल गई। क्या स्त्रियें भी मुण्डन करवा डालेंगी? देव मन्दिरों एवं मूर्तियों को तोड़ने वाले बुतशिकन मुसलमानों वाला काम अब आर्य-समाजी कर रहे हैं। पो० बिन्दकी जि० फतेहपुर में वहां के आर्यसमाजियों ने एक शिव मन्दिर की भूमि पर अनुचित अधिकार करके शिवलिङ्ग तथा हनुमान् की मूर्ति को कुए में फेंक दिया। इस घटना को जानकारी श्री प्रकाशवीर शास्त्री जी को भी है। सच बात तो यह है कि ईसाई तथा मुसलमान अब निश्चिन्त हो गए हैं कि हमारा कार्य अब आर्य-समाज ने सम्भाल लिया है।

इसी प्रकार 'वैदिक संध्या' के नाम पर भी स्वामी दयानन्द जी ने मन घड़न्त बातें लिख मारी हैं। आरम्भ में ही 'इन्द्रियस्पर्श मंत्राः' शीर्षक

देकर नीचे ओ३म् वाक् २ चक्षुः" नाभि' आदि ये किस वेद का मंत्र है ? और साधारण बालक भी जानता है कि नाभि की परिगणना इन्द्रियों में नहीं होती। मैं बड़ी गम्भीरता के साथ कहना चाहता हूं कि आपके मंच से अभी अभी जनता से आर्थिक सहयोग के लिए अपील की गई है यदि पूर्वोक्त बातें आप वेद मंत्रों से सिद्ध कर दें तो 'सनातन धर्म विजय महोत्सव' की ओर से जिस पुरस्कार राशी की घोषणा की गई है मैं वह दिलवाने का उत्तर दायित्व लेता हूं।"[1]

आर्य समाज की ओर से महाशय ओ३म्प्रकाश जी ने उत्तर देते हुए कहा–हमारी ओर से मूर्तिपूजा एवं अवतारवाद दो विषय ही शंका समाधान या शास्त्रार्थ के लिये निश्चित किये गये हैं अतः विषयान्तर उपस्थित करना उचित नहीं। वैदिक संध्या में प्रयुक्त वैदिक शब्द का यह तात्पर्य नहीं कि वेद में हीं लिखित हों। वेद प्रतिपादित वेदांग प्रतिपादित भी वैदिक होगा। गर्म देश में मुण्डन की स्थिति में आप स्वयं क्या करेंगे अब आप क्या करते है ? क्या स्त्रियों का मुण्डन करवाते है ? मंत्र का अर्थ भी केवल वेद मंत्र ही नहीं है यहां 'इन्द्रिय स्पर्श मंत्राः' का तात्पर्य वेदमंत्र से ही नहीं है। 'मननात् मंत्रः' किसी भी मनन की गई वस्तु को मंत्र कह सकते है।'

महाशय ओ३म् प्रकाश जी ने समाधान के नाम पर जो लोपापोती की उससे जनता यथार्थ को समझने लगी थी। किसी भी बात का प्रमाण किंवा तर्क के आधार पर उत्तर देनें की स्थिति में वे नहीं रह गये थे।

श्री प्रेमाचार्य जी ने दूसरी बार सीधा प्रश्न रक्खा—'मूर्तिपूजा का विरोध करने वाले स्वामी दयानन्द स्वयं मूर्ति (जड़) की उपासना से क्यों नहीं बच पाये ? सनातनधर्मी जड़ पाषाण की पूजा नहीं करते यदि ऐसा होता तो सर्वव्यापकत्व के कारण मूर्ति में भी विद्यमान परमेश्वर की स्तुति करनें की अपेक्षा सनातनधर्मी पाषाण की मूर्ति की महिमा गाते 'ऐ काले गोरे चिकनें पत्थर की मूर्ति तुझे जयपुर के कारीगरों ने बनाया है' आदि-आदि। किन्तु सनातनधर्मी तो मूर्ति में व्यापक प्रभु की ही पूजा स्तुति

---

१. प्रत्येक बात को वेदमंत्रों से सिद्ध करने पर एकएक हजार पुरस्कार की घोषणा की गई थी। पांच प्रश्नों के लिये पाँच हजार घोषित किये जा चुके थे।

प्रार्थना करते हैं। मूर्ति ईश्वर को समझने का—पूजने का माध्यम है जैसे भूगोल के नक्शे में विद्यमान गंगा, यमुना, हिमालय से तत्तत् यथार्थ का ज्ञान हो जाता है इसी प्रकार ब्रह्माण्ड में व्यापक ईश्वर का मूर्ति के माध्यम से ज्ञान होता है।

स्वामी दयानन्द ने संस्कार विधि में लिखा है—

ओ३म् प्रतिष्ठे स्थो विश्वतो मा पातम् । (समावर्तन)

पं० भीमसेन जी तथा आत्माराम अमृतसरी ने इसका हिन्दी अनुवाद किया—हे उपानहौ (जूतो !) तुम कांटों आदि से बचाकर पैरों की ठीक स्थिति करने वाले हो सब ओर से मेरी रक्षा करो। (संस्कार चन्द्रिका पृ० ४१३) तो क्या जूतों में वायरलैस सैट है जो आपकी बात सुनता है। जूतों से रक्षा को प्रार्थना करना जड़ोपासना के अतिरिक्त और क्या है इसी प्रकार 'ओं विष्णो दंष्ट्रोऽसि कहकर उस्तरे की प्रार्थना की गई है। म० राम गोपाल जी ने उसका अर्थ किया—'हे उस्तरे तू। कल्याणकारी है और अच्छे लोहे का बना हुआ है। तुझे नमस्कार है। तू इस बालक को हानि मत पहुंचाना। (सं० प्रकाश पृ० ७३)

आप स्वामी जी की जड़ोपासना को तो ठीक मानते हैं किन्तु परमेश्वर की दिव्य भव्य प्रतिमा के अर्चन का खण्डन करते हैं जो मनोविज्ञान के अनुकूल सिद्ध वैदिक सिद्धान्त है।"

महाशय ओ३म् प्रकाश जी ने संस्कार विधि के उद्धरणों तथा अर्थ को प्रेमाचार्य जी का वाक्छल बतलाया। भूगोल के नक्शे के विषय में उन्होंने कहा कि नक्शे तो विधिवत् सर्वे करके बनाये जाते हैं तत्तत् वस्तुओं की लम्बाई चौड़ाई का उनमें संकेत लिखा रहता है मूर्ति के विषय में यह बात नहीं कहीं जा सकती। ध्यान के लिए तो योग दर्शन में 'ध्यानं निर्विषयं मनः' कहा है। मूर्ति पूजा के समय तो ध्यान अन्य विषयों में लगा रहता है आंखें बन्द करने पर ही ध्यान हो सकता है। अन्य किसी भी तर्क को म० ओ३म् प्रकाश जी न छू पाये।[1]

श्री प्रेमाचार्य जी ने सभापति महोदय श्री प्रकाशवीर शास्त्री एवं संयोजक महोदय से बारम्बार आग्रहपूर्वक प्रार्थना की कि 'इन तर्काभासों

१. ईसाई बनने वाली बात तथा बिन्दकी के मन्दिर वाली चर्चा को म० ओम्प्रकाश बिल्कुल ही छोड़ गये।

का उत्तर देने का अवसर मुझे दिया जाय' किन्तु रेते की दीवार धम से बैठती देखकर और जनता के बदलते रुख का अनुमान लगाते हुये अपनी मूर्तिपूजा विषयक थोथी युक्तियों का दम निकलते देख सभापति महोदय ने बिना कारण ही सभा समाप्ति को घोषणा कर दी। बात का निर्णय न होते देख कर जनता को बड़ी निराशा हुई। हर हर महादेव के गगन भेदी नारों से पण्डाल गूंज उठा।

दयानन्दी नेता चोधराहट में ये भूल गए थे कि वहां केवल उनके अन्धानुयायी दयानन्दपन्थी ही नहीं थे, अपितु हजारों की संख्या में तटस्थ जनता भी थी जो दोनों पक्षों के सिद्धान्तों की यथार्थता जानना चाहती थी। दयानन्दियों ने अब तक बड़ा शोर किया हुआ था अपने पत्रों में, किन्तु विचार विनिमय का भी समय जो नहीं दे पाये वे शास्त्रार्थ के लिए कहां तैयार हो सकते थे।

सनातनधर्म के ये विद्वान् हनुमान अंगद की भांति लंका में राम-नाम का जयघोष करके जन-जन के उद्घोषों के साथ 'सनातनधर्म विजय-महोत्सव' के मंच पर आ गये।

परमपिता परमेश्वर से प्रार्थना है कि इस भ्रान्त बन्धु समाज को सद्बुद्धि प्रदान करें और—

येनास्य पितरो याता येन याताः पितामहाः।

★

सत्य का बोल बाला........

(शास्त्रार्थ महारथी पं० श्री माधवाचार्य शास्त्री एवं आर्यसमाज द्वारा शास्त्रार्थी के रूप में पुरस्कृत विद्वान् म० रुद्रदत्त शास्त्री और म० इन्द्रदेवजी के मध्य में २६ दिस० ६९ को होने वाले शास्त्रार्थ में दयानन्दी हार रहे थे ये दयानन्द शास्त्रार्थ शताब्दी के उपसंयोजक के निम्नलिखित पत्र से स्पष्ट है। —सम्पादक)

श्रद्धेय प्रकाशवीर जी शास्त्री, महेन्द्रप्रताप शास्त्री जी, शिव कुमार शास्त्री जी,

हरिश्चन्द्र [कालेज] में शास्त्रार्थ के लिये कुछ विद्वान् गए हैं, ऐसा मुझे ज्ञात हुआ है। क्या वे अधिकृत हैं? यदि हां, तो उनकी सहायता के लिये कुछ और विद्वानों की आवश्यकता का अनुभव हो रहा है। तुरन्त विद्वानों को भेजिए।

—कैलाशनाथ सिंह

ऊल में चूल : मेंढ़की को जुकाम

ले०—महामंत्री अ० भा० स० ध० दिग्विजय मंडल दिल्ली

हमारी शास्त्रार्थ घोषणा के उत्तर में अमर स्वामी जी और श्री पं० बिहारीलाल शास्त्री का एक सम्मिलित पोष्टकार्ड हमें मिला जिसमें हमारे ग्रन्थ क्यों के उल्लेख से दर्शन शास्त्रों में सनातनधर्मी सिद्धांतों के अस्तित्व पर शास्त्रार्थ करने की डींग हांकी गई है। ये दोनों ही महाशय हमसे कई बार परास्त हो चुके हैं परन्तु फिर भी निर्लज्जता पूर्वक तीसमारखां बनने का दुष्प्रयत्न करते हैं। श्री अमर स्वामी जो प्रथम बार अन्यून पैंतीस वर्ष पूर्व बद्दोमल्ली (पंजाब) नामक स्थान में जो कि अब पाकिस्तान में चला गया है एक मुस्लिम रईस की मध्यस्थता में पुराणों पर शास्त्रार्थ करने आए थे परन्तु हमारे केवल यह पूछ लेने पर कि आपने कभी किसी पुराण को अपनी आंखों से भी देखा है, अच्छा चलो अट्ठारह पुराणों के नाम ही बतला दो तो तुम जीत गये। बस फिर क्या था, उस समय स्वामी जी ठाकुर अमरसिंह नाम से आर्य समाज के भजनोपदेशक थे पुराण पढ़े ही नहीं थे—नाम क्या बतलाते अन्यून पन्द्रह मिनट तक चुपचाप सन्नाटे में खड़े रहे, अन्त में मध्यस्थ ने कहा कि महाशय जो कुछ बोल सकते हो तो बोलो नहीं तो तशरीफ ले जाईये क्यों लोगों का टाइम बर्बाद करते हैं। बस यह सुनते ही शशक शृङ्ग की भांति पलायन कर गए। फिर राजधनवार में बुरी तरह परास्त हुये, मध्यस्थ राजा साहिब के निर्णय सहित वह शास्त्रार्थ छपा है। श्री बिहारीलाल जी ने लखनऊ शास्त्रार्थ में यह लिखकर दिया था कि 'वेद में मूर्तिपूजा करना पाप है ऐसा कहीं नहीं लिखा' पश्चात् स्वयं मान हानि का दावा किया और स्वयं ही फिर हमें खेद पत्र लिख कर दिया तब मुकद्दमा समाप्त हुआ। यह सब वृत्त हमारे 'शास्त्रार्थ महारथी' शीर्षक में सप्रमाण मुद्रित है।

पत्र की प्रति लिपि

कार्तिक शुक्ल १२ गुरुवार | सन्यास आश्रम, गाजियाबाद

१६- २-६६

श्रीमान् माधवाचार्य जो,

आपका ग्रन्थ 'क्यों' नाम वाला देखा आपको स्वाभाविकी मनोवृत्ति

इस ग्रन्थ में भी प्रकट हुई देखकर दुःख हुआ। हम चाहते थे कि हम और आप मिलकर नास्तिकता को मिटाने का यत्न करें। पर आपने आर्य-समाज की निन्दा करना ही अपना परम धर्म बना रखा है।

आपने "क्यों" पूर्वार्द्ध पृ० ५० पर लिखा है कि—'आर्यसमाज भी यदि किसी एक भी दर्शन को मान ले तो उसको रेत की दीवार तत्काल धम्म से गिर जाय। सभी दर्शनों में—मूर्तिपूजा, ईश्वर का अवतार, मृत श्राद्ध, जन्मना वर्ण व्यवस्था, तीर्थ और छुवाछूत आदि वैदिक विषय ओत-प्रोत हैं।"

आप इन विषयों को वेदों में कभी सिद्ध नहीं कर सके अब दर्शनों में ओतप्रोत बताते हैं। दर्शनों में ही सही दिखाइये।

मैं अमर स्वामी परिव्राजक और श्री पं० बिहारी लाल जी शास्त्री काव्य तीर्थ आप के साथ इन विषयों पर शास्त्रार्थ करने को उद्यत हैं। पहिला शास्त्रार्थ मूर्तिपूजा पर होगा, दूसरा ईश्वरावतार पर और तीसरा मृतक श्राद्ध पर होगा इसी प्रकार अन्य विषयों पर भी इनके पीछे शास्त्रार्थ होंगे।

यदि आप शास्त्रार्थ से किसी प्रकार कतरायेंगे तो आपकी पराजय समझी जायगी। आप पत्र पाने की तिथि से १५ दिन के भीतर शास्त्रार्थ की स्वीकृति देने का कष्ट सहन करें।

भवदीय—

अमर स्वामी परिव्राजक,

पं० बिहारीलाल जी काव्यतीर्थ.

सन्यास आश्रम गाजियाबाद (उ० प्र०)

महाशयों का उक्त पत्र आर्य मित्र में भी अविकल छपा था हमने तत्काल उक्त पत्र का श्लोक बद्ध निम्नलिखित उत्तर दिया—

हमारा श्लोकबद्ध प्रत्युत्तर

निलिम्पवाणीप्रवणावधीरणी कृताविलाभासविकासितात्मने।
सदासदाचार रतायधीमते बिहारिलालाय नमोऽग्रजन्मन ॥१॥

वादित्र संवादन लब्ध कीर्तये कृषाणवंशप्रभवाय धीमते ।
पात्राय भूदेवजनाशिषां सदा शंतेऽमरस्वामिवरायभिक्षवे ॥२॥
लब्धंदलं वामतिहास्यसंयुतं शृगालरावध्वनि गर्जनोपमम् ।
ग्रन्थे मया यल्लिखितं युवाभ्यां तत् खण्डनीयं यदिशक्तिरस्तिचेत् ॥
पत्रेषु दृष्ट्वा किलवाद घोषणां काशीं गतोऽहं मुख मर्दनाय वः ।
परं दयानन्दमतानुयायिनः पलायिता गर्दभश्रृंगवत्ततः ॥४॥
अष्टादश पुराणानां नामान्यपि न वेत्ति यः ।
स करिष्यति वादं किं बह्वोमल्यां पराजितः ॥५॥
बिहारिलाल दोषज्ञस्तीर्थं एव न वादकृत् ।
श्री लक्ष्मणपुरे सोऽयमचिरेण पराजितः ॥६॥
'क्यों' ग्रन्थे मुद्रितेऽतीतः कालः षोडश हायनः ।
भङ्गां पीत्वाप्रसुप्तौ किं मद्यावधि महाशयौ ॥७॥
तथापि यदि शक्तिश्चेत् खण्डनीया मदुक्तयः ।
लेखेनैव हि सम्भाव्या लिखितस्य निराकृतिः ॥८॥
दयानन्दकृता ग्रन्था वेद बाह्या अदर्शनाः ।
कार्यां भावि समारोहे बाढं वादो विधीयताम् ॥७॥

—माधवाचार्य शास्त्री

हमारे उक्त पत्र के उत्तर में श्री बिहारी लाल जी का एक पत्र मिला जिसमें टूटे फूटे दो चार अनुष्टुप् श्लोक पदे २ अशुद्ध थे ऐसा ही चार पंक्ति गद्य था नमूने के लिये नीचे कुछ अंश अङ्कित हैं ।

ओ३म्

रामपुर गार्डन बरेली
२३-११-६९

अशिष्टतायुतं पत्रं तव लब्धं मया सुहृत् ।
शास्त्रार्थघोषणां कुर्वन् माधव त्वं न लज्जसे ॥१॥

अकाट्याः सर्व सिद्धान्ता दयानन्दस्य स्वामिनः ।
न चोट्टङ्कयितुं शक्यास्त्वादृशैरुदरंभरैः ॥२॥
अग्रे पत्रं न दातव्यमभाष्यस्त्वं मया मतः ।
आसुरीभावयुक्तैस्तु न संलापो सुखावहः ॥३॥
शास्त्रार्थ विषये वयं सभानु शासने बद्धाः ।
अतो वाराणसीं गत्वा त्वं विक्रमं दर्शय ॥४॥

—बिहारीलालः शास्त्री

काशी में दोनों अनुपस्थित

काशी शास्त्रार्थ शताब्दी में जहां कि आर्यसमाज के प्रायः सभी आर्योपदेशक उपस्थित थे वहां उक्त दोनों महाशय चेलेंज देकर भी हमारी स्वीकृति पाकर घबड़ा गये अतः वहाँ पहुँचे ही नहीं हम ढूंढते रह गये। महाशय जी ने आगे पत्र न देने की भी अपने पत्र में हिदायत की है। गोयाकि अब वे हमसे नवोढा की भान्ति प्रणय कोप से कुपित होकर कोप-भवन में प्रविष्ट होने का अभिनय करने लगे हैं परन्तु हम यूं कब मानने वाले हैं स्वयं उन तक पहुंचेंगे।

पाठक जरा हमारे श्लोकबद्ध पत्र को भी पढ़ें जिसमें हमने महाशय-जी को किन शब्दों से स्मरण करते हुए उनको जन्मजात ब्राह्मण समझकर प्रणाम तक भी की है परन्तु वे अपने पत्र में प्रणाम न नमस्ते कुछ भी शिष्टाचार नहीं करते उल्टा अकारण ही—'उदरंभर' 'अभाष्य' 'आसुरी भावयुक्त' आदि असभ्य गालियें लिखते हैं।

स्वा० दयानन्द जी ने अपने यजुर्वेद भाष्य में लिखा है कि 'विद्वानों को जामाता के समान जानो' सो सम्भवतः इसी रिश्तेदारी का वे निर्वाह कर रहे हैं हम बुरा नहीं मानते।

दूसरे श्लोक का द्वितीय पाद 'पंचमं लघु सर्वत्र' नियम से अशुद्ध है। पञ्चम पद्य तो रबड़ छन्द है जो बहुत प्रयत्न करने पर भी अपाठ्य है। लेख तो प्रथम श्रेणी के अबोध बालक के समकक्ष है। ये हैं दयानन्दियों के महा-महा आर्योपदेशक !



मूर्तिपूजा के सम्बन्ध में महापुरुषों के उद्गार

—आद्य शङ्कराचार्य

(क) अथ ब्रह्मावतारस्य शिवस्योपासनं श्रुतौ ।
प्रोक्तं तस्य निरासो नो कर्तुं केनापि शक्यते ।
(शङ्कर दिग्विजय)

(ख) निर्गुणमपि सद्ब्रह्म नामरूपगतैर्गुणैः सगुणमुपासनार्थं तत्रतत्रोपदिश्यते । (ब्रह्मसूत्रे शाङ्करभाष्ये २।३।१३)

अर्थात्—(क) ब्रह्म के अवतार शिवभगवान् की उपासना वेद में कही-गई है उसका निराकरण कोई भी नहीं कर सकता (ख) निर्गुण होता हुआ भी ब्रह्म नाम और रूप गत गुणों के कारण सगुण हुआ उपासना के लिये जहां तहां वेदादिशास्त्रों में उपदिष्ट है।

श्रीरामानुजा चार्य

······परमात्मादि शब्दनिर्दिष्टमुपास्यं वस्तु इह तैरेवशब्दै रनूद्य तस्य नारायणत्वं विधीयते ।

(ब्रह्मसूत्रे श्रीभाष्ये लिंगभूयस्त्वाधिकरणे)

वेदादिशास्त्रों में परमात्मा आदि शब्दों द्वारा जिस उपासना करने योग्य वस्तु का निर्देश किया गया है यहां उन ही शब्दों द्वारा उसका अनुवाद करके उसका नारायणत्व सिद्ध किया गया है।

आचार्यपाणिनि और भाष्यकार पतञ्जलि

जीविकार्थे चापण्ये (५।३।९९) जीविकार्थं यदविक्रीयमाणं तस्मिन् वाच्ये कनोलुप् । यथाशिवस्य प्रतिमाशिवः । यास्त्वेताः सम्प्रति पूजार्थास्तास्तु भविष्यन्ति ।

अर्थात्—जो जीविका के लिये अविक्रीयमाण मूर्ति हो वहा 'कन्' प्रत्ययका लुप् होता है। जैसे शिव की प्रतिमा को 'शिवः' हो कहा जाएगा जो प्रतिमा पूजा के निमित्त प्रतिष्ठापित होंगी वहां यह हो जाएगा।

बौधायन

स्नात्वा शुचौ गोमयेनोपलिप्य प्रतिकृतिंकृत्वा अक्षतपुष्पै र्यथालाभमर्चयेत् (बौधायन कल्प परिचर्य्या प्रकरण सूत्र २)

अर्थात्—स्नान करके पवित्र भूमि को गोमय से लीपकर प्रतिमा बनाकर अक्षत पुष्प आदि यथालब्ध सामग्री से पूजन करे।

मनु महाराज और समस्त टीकाकार

(क) नित्यं स्नात्वा शुचिः कुर्यात्···देवताभ्यर्चनं चैव।
(मनु २।१७६)

(ख) प्रतिमानामेतत्पूजनविधानमिति मेधातिथिः।

(ग) प्रतिमादिषु हरिहरादिदेव पूजनमिति कुल्लूकभट्टः।

अर्थात्—(क) प्रत्येक आस्तिक को नित्य स्नान करके पवित्र होकर देवपूजन करना चाहिये (ख) मनु यहां यह प्रतिमा पूजन का विधान करते-हैं (ग) प्रतिमा द्वारा विष्णु शिव आदि देवों का पूजन करना चाहिये।

भगवान् राम द्वारा शिव पूजन

बेलावनं समासाद्य रामः पूजामुपासते।
कृत्वा रामेश्वरं नाम्ना देवदेव जनार्दनम्। (पद्मसृष्टि ४०)

अर्थात्—भगवान् राम ने बेला वन में पहुंचकर देवाधिदेव जनार्दन भगवान् की रामेश्वर नाम से प्रतिष्ठापित करके पूजा की।

स्वामी दयानन्द सरस्वती

जिनको तुम बुत् परस्त समझते हो वे भी उन २ मूर्तों को ईश्वर नहीं समझते किन्तु उनके सामने परमेश्वर की भक्ति करते हैं।
(सत्यार्थप्रकाश चतुर्दश समुल्लास प्रष्ट ३०)

कुरान में मूर्तिपूजा—

अपना मुख मस्जिदुल्हराम की ओर फेर जहां कहीं तुम हो अपना मुख उसकी ओर फेर लो। (मं० १ सि० २ सू० २ आ० १३५)

मुहम्मद साहिब के जीवन चरित्र में प्रसिद्ध है कि उनके समय में काबाकी मस्जिद की मरम्मत की गई पश्चात् 'संगे असबद' नामक शिवलिंग को पुनः मस्जिद की प्रधान वेदी पर स्थापित करने का अवसर आया मुसलमानों के चार फिर्कों में झगड़ा हो गया हर एक खानदान स्वयं स्थापित करना चाहता था जब खून खराबी की नौबत आ पहुंची तो सबने हजरत मुहम्मद को सर पंच मानकर निर्णय लेने का निश्चय किया मुहम्मद साहिब नें एक कम्बल में मूर्ति को रखकर चारों कोने का चारों फिर्क पकड़कर रखने का निर्णय दिया वैसाही किया गया वह प्रतिमा अब भी काबा में विद्यमान है हाजी उसको हज्ज के समय श्रद्धा से चूमते हैं 'खानाए खुदा' नामक फिल्म में हमारे प्रतिनिधि नें स्वयं उस प्रतिमा को काबे की मस्जिद में प्रतिष्ठित देखा है। काश्मीर में रक्खे मोहम्मद साहिब के कथित एक बाल के इधर उधर हो जानेपर कितना हंगामा मचा था यह सब जानते हैं।

बाइबिल में मूर्तिपूजा—

ईश्वर नें आदमको अपने स्वरूप में उत्पन्न किया। (तौरेत पर्व १ आयत २७)

(ख) नूह ने होम की भेंट वेदी पर चढ़ाई और परमेश्वर ने सुगन्ध सूंघा (प० ८ आं० २१)

(ग) ईश्वर अपने तम्बू के द्वारपर बैठा था देखा कि तीन मनुष्य उसके पास खड़े हैं। (प० १८।१–३)

(घ) परमेश्वर ने सरः से भेंट किया सरः गर्भिणी हुई। (तौरेत उत्पत्ति पर्व २१। आयत १-२)

जिस ईश्वर का स्वरूप आदम के समान हो, सूंघता हो, तम्बू के द्वार पर बैठता हो, और भेंट कर गर्भ करता हो। वह निराकार नहीं हो-सकता। रोमन कैथोलिक ईसाई कुमारी मरियम की पाषाण मूर्ति को पूजते-है प्रणाम करते हैं मोम बत्तियें जलाते हैं। प्रोटस्टैन्ट भी 'क्रास' को गल में लटकाते हैं, कबरों पर पत्थर के क्रास स्थापित करते हैं।

महात्मा गांधी–

(एक पादरी को उत्तर देते हुये) रही बात मूर्तिपूजा की सो किसी न किसी रूप में उसे माने बिना आपका काम नहीं चल सकता। मस्जिद तथा मकबरे बनानें के लिये अपार धन का दान करना मूर्ति पूजा नहीं तो क्या है? और जब रोमन कैथोलिक लोग पत्थर से बनाई गई या कपड़े अथवा कांच पर चित्रित की गई कुमारी मेरी और सन्तों की काल्पनिक मूर्तियों या चित्रों के सामने घुटने टेकते हैं तब वे क्या करते है ठीक इसी तरह हम पत्थर की पूजा नहीं करते परन्तु पत्थर या धातु की मूर्ति में ईश्वर की पूजा करते है। (हरिजन १३।३)

काशी विश्वनाथ की भव्य मूर्ति मौ० हसरत मोहानी के नजदीक एक पत्थर का टुकड़ा हो पर मेरे लिये तो वह ईश्वर की प्रतिमा है। मेरा हृदय उसका दर्शन करके द्रवित होता है।

(हिन्दी नव जीवन ८।१।२५ पृ० १७८)

समर्थ स्वामी रामदास महाराज के द्वारा अपने हाथों निर्मित मृण्मयी एक सौ आठ हनुमान् जी की प्रतिमाएं महाराष्ट्र और आन्ध्र के अनेक नगर ग्रामों में विद्यमान हैं। जो ग्राम देवता के रूप में पूजी जाती हैं।

परमहंस श्री रामकृष्ण जी एक दुर्गा मन्दिर के ही पुजारी थे जिस की उपासना से उन्हें चमत्कार पूर्ण सिद्धियें प्राप्त हुई थी।

अमेरिका के सर्व धर्म सम्मेलन में स्वामी विवेकानन्द का जो भाषण हुआ था उसमें मूर्ति पूजा का बड़े ही वैज्ञानिक ढंग से निरूपण हुआ है। सम्प्रति विदेशों में रामकृष्ण मिशन संघ की अनेक शाखाएं है जहां मन्दिर प्रतिष्ठापित हुये है।

स्वामी रामतीर्थ के विदेशी भक्त भगवान् कृष्ण के चित्र रखकर कीर्तन करते हुये तन्मय हो जाते है गौडीय मठ के महात्माओं के अनेक विदेशी भक्त रथयात्रा निकालते हुये उसके सामने कीर्तन करते हुये भक्ति विभोर हो जाते है धर्म युग में चित्र छपे हैं।



बज गया ! बजा गया !! सनातन धर्म का डंका बज गया !!!

आर्यसमाज चारों खाने चित्त

(सनातनधर्म विजय उत्सव वाराणसी का आँखों देखा हाल)

—भक्त राम शरणदास, पिलखुवा—

भूत भावन भगवान् विश्वनाथ की प्यारी नगरी काशी यूं तो अनादिकाल से ही धर्म प्रेवी आस्तिकों के लिए परम पावन पुरी रही है, किंतु २१ दिसम्बर से ३० दिसम्बर तक अभी २ वहाँ जो पूज्यपाद, धर्ममूर्ति अनन्त श्री स्वा० करपात्री जी महाराज के तत्वावधान में सनातनधर्म का विशाल विजय उत्सव मनाया गया था। जिस में विश्व भर के सभी नास्तिक मतों तथा विशेष कर नास्तिकों के अगुवा आर्यसमाज के परखचे उड़ा दिये गये थे, के कारण काशी की महिमा चौगुनी हो गई है। भगवती गंगा के किनारे आर्यसमाज की किस्मत का तो फैसला हो ही गया है। उसकी वकत अब खाक के बराबर भी नहीं रह गई है। किन्तु काशी में जो सनातनधर्म की विजय का डंका बजा है उसकी गूंज अब युगों २ तक गूंजती रहेगी और नास्तिकों के कलेजे दहलाती रहेगी।

मुझे पूज्य शास्त्रार्थ महारथी पं० माधवाचार्य जी शास्त्री तथा शास्त्रार्थ पंचानन श्री प्रेमाचार्य जी शास्त्री के साथ काशी जाने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। हरिश्चन्द्र कालेज के विशाल प्रांगण में सनातनधर्म विजय उत्सव का भव्य मंच बनाया गया था जिस पर ज्योतिमठ, काशी, द्वारका तथा पुरी पीठ के चारों जगद्गुरु शंकराचार्य महाराज एवं अनन्त श्री स्वा० करपात्री जी महाराज के अतिरिक्त वेद, व्याकरण, न्याय, मीमांसा, आदि गूढ़ विषयों के पारंगत काशी के सैंकड़ों उद्भट विद्वान् साथ ही शास्त्रार्थ महारथी जी, पं० दीनानाथ जी सारस्वत, शास्त्रार्थ पंचानन श्री प्रेमाचार्य जी, आदि सनातनधर्म के शास्त्रार्थी विद्वान् विराजमान होते थे। सैंकड़ों दण्डी स्वामी शोभित होते थे और पण्डाल में दस हजार से भी अधिक संख्या में धार्मिक जनता उपस्थित रहती थी। प्रातःकाल वेद, पुराणों के गम्भीर विषयों पर संस्कृत में शास्त्रार्थ होते थे। जब हजार बार बुलाने पर भी कोई समाजी सामने न आता था तो विद्वान् लोग आपस में ही शास्त्रार्थ करते।

कोई एक पण्डित भगवान् विश्वनाथ से क्षमा मांगते हुए दयानन्दी बन कर आर्यसमाज का पक्ष रखते थे फिर उस पर खूब वाद विवाद होता था। एक दिन शास्त्रार्थ महारथी जी ने विनोद में पण्डितों से कहा कि आप लोगों से दयानन्दियों

का पार्ट पूरी तरह अदा नहीं किया जा रहा है, उनकी बातें कहने के साथ २ स्वा० दयानन्द की तरह दो चार गालियाँ भी तो बीच २ में सनातनधर्म को सुनाते जाइये। आप अभी कच्चे खिलाड़ी हो।' इस पर सभा ने खूब अट्टहास किया।

दोपहर बाद और रात्रि की सभाओं में खुले भाषण होते थे जिस में विभिन्न विद्वान् नास्तिक मतों और खासकर आर्यसमाज की धज्जियाँ उड़ाते थे। इस समारोह के साथ २ शंका समाधान और शास्त्रार्थ का खुला चैलेंज रहता था। कोई भी व्यक्ति कभी भी किसी भी विषय पर शंका प्रस्तुत कर सकता था जिसका तत्काल समाधान किया जाता था। दयानन्दी एक साल से दिग्विजय का हल्ला मचाते घूम रहे थे। यहाँ सनातन धर्म के मंच से रोज सैंकड़ों बार उनको ललकारा जाता था सामने आने के लिए। पर उनकी तो नानी मरी हुई थी। कौन सामने आता? इधर शास्त्रार्थ महारथी जी जो बैठे थे। किस दयानन्दी की मां ने घौंसा खाया है जो उनसे आंख मिलाता।

समय बीता जा रहा था। शास्त्रार्थ के लिए चिट्ठी पत्री आ जा रही थी। समाजी तो इसी फिराक में थे कि यूं ही बातचीत में ही टाइम निकल जाये। शास्त्रार्थ होने की नौबत न आए। वर्ना हम कहीं के न रहेंगे सो उनकी झूठी डींग और दमखम को आंकने के लिये २५ दिसम्बर को शास्त्रार्थ पंचानन श्री प्रेमाचार्य जी उनके पण्डाल में जा धमके और उन्हें शास्त्रार्थ के लिये ललकारा अब तो समाजियों को सांप सा सूंघ गया। उन्हें क्या पता था कि ढूंडते २ मौत उन के खेमें में ही आ पहुंचेगी। लगे टालमटोल करने। 'अभी शास्त्रार्थ के नियम और स्थान निश्चित होने हैं तभी करेंगे।' कह कर शास्त्रार्थ से तो भागने लगे। पीछे बड़ी 'ऊहापोह' और सोच विचार के बाद शास्त्रार्थ पंचानन जी को ५ मिनट बोलने का समय दिया गया। उससे पहले कोई म० विद्यानन्द अपने व्याख्यान में आर्यसमाज की महिमा गा रहे थे कि आर्य समाज ने हिन्दू-जाति को मुसलमान और ईसाई होने से बचाया आदि आदि।

मंच पर अध्यक्ष रूप से श्री प्रकाशवीर शास्त्री जी बैठे थे। श्री प्रेमाचार्यजी ने अपने संक्षिप्त भाषण में आर्यसमाज की पोल खोल कर रख दी। उन्होंने गर्ज कर कहा—'आर्यसमाज ने हिंदू जाति को ईसाई मुसलमान होने से बचाया नहीं अपितु बनाया है।' जैसे मुसलमानों ने हिंदू मन्दिरों को ध्वस्ज किया और हिंदुओं की चोटियां काटी उसी प्रकार आर्यसमाज ने भी फतेहपुर जिला की विन्दकी (तहसील) में एक शिव मन्दिर और हनुमान् मन्दिर खोद कर फैंक दिया है तथा स्वा० दयानन्द ने सत्यार्थ प्रकाश में उष्ण देश में चोटी कटवा देने का आदेश दे ही रखा है। अन्य हिन्दुओं को तो छोड़ो स्वा० दयानन्द अपनी प्रिय शिष्या रमाबाई को तथा स्वा०

श्रद्धानन्द अपने प्यारे बेटे हरिश्चन्द्र को ईसाई बनने से न रोक सके अतः मेरा दावा है कि आर्यसमाज मुसलमान ईसाइयों का एजेन्ट है।'

इसके अतिरिक्त और भी बहुत सी बातें सत्यार्थप्रकाश और संस्कार विधि की कहीं जिनसे आर्यसमाज की अवैदिकता सिद्ध होती थी जैसे—जूता, उस्तरा, शीशा, छतरी, आदि की दयानन्दोक्त पूजा विधियां। इस एक व्याख्यान ने ही आर्यसमाज की बधिया बिठा दी। सभा में सनसनी फैल गई। जवाब देने के नाम पर म० ओमप्रकाश आंय बांय साँय करते रहे। कोई माकूल उत्तर न बन पड़ा। अघर बीच में ही प्रकाशवीर शास्त्री जी ने सभा समाप्ति की घोषणा कर दी और दयानन्द शताब्दी के संयोजक महेन्द्र प्रताप शास्त्री ने श्री प्रेमाचार्यजी के आगे से माइक खींच लिया।

अपने ही मंच पर भरी सभा में हुई इस किरकरी की झेंप मिटाने आर्य-समाज ने अपने चार उपदेशक अगले दिन सनातनधर्म के पण्डाल में रुखसत किये। उधर उस समय शास्त्रार्थमहारथी जी आर्यसमाज के छिलके उतार रहे थे। स्वा० दयानन्द की और उनके ग्रंथों की अवैदिकता पर पूरे पाँच घंटे शास्त्रार्थ हुआ। समाजियों को बोलने की खुली छूट दी गई। इस शास्त्रार्थ में दयानन्दी उपदेशकों के ही हाथों आर्यसमाज के सिद्धांतों पर जो चौंका लगा, समाजियों पर जो बे भाव के पड़े, जो थूका फजीहत हुई कि सारी उमर न भूलेंगे। म० रुद्रदत्त ने 'मन्दिर की मूर्ति में भी भगवान् आर्यसमाज मानता है।' भरी सभा में यह स्वीकार करके तो आर्यसमाज की हजामत ही कर डाली। आनन्द आ गया। कोई गैरतमन्द समाजी होता तो या तो सनातनधर्म की शरण में आ जाता अथवा गंगा में डूब मरता।

ये दो करारे थपेड़े लग जाने के बाद आर्यसमाज में अब इतना दम बाकी नहीं था कि वे लिखित या मौखिक शास्त्रार्थ में सनातनधर्म से उलझने की हिमाकत करते सो बाकी के दो दिन भी यूं ही गुजार देना चाहते थे। किंतु श्री स्वा० करपात्री जी आदि पूज्य धर्माचार्यों ने अपने सब नियम और शर्तों का आग्रह छोड़कर अपने विद्वानों को शास्त्रार्थ महारथी जी के नेतृत्व में समाजियों के पण्डाल में उन की सब शर्तें मान कर शास्त्रार्थ करने के लिये भेजा। यह आफत आई देखकर समाजियों ने शहर कोतवाल और डी० एम० की शरण में जाकर गिड़गिड़ाना शुरू किया, १४४ धारा घोषित करवा कर और पुलिस हस्तक्षेप से शास्त्रार्थ स्थगित करवा कर शास्त्रार्थ सुनने को आए हजारों लोगों को निराश कर दिया। इस प्रकार उनके दिग्विजय दम्भ का कचूमर निकाल दिया गया।

सनातनधर्म विजय महोत्सव के इस भव्य समारोह के साथ २ श्रौत चातु-

मस्थि यज्ञ का भी आयोजन था जिसे काशी के प्रौढ़ वदिकों ने सम्पन्न किया। इस अपूर्व यज्ञ की विधि जानने वाले और करा सकने की योग्यता रखने वाले वैदिक भी आज सारे भारत में अंगुलियों पर गिने जाने लायक ही हैं।

विजय समारोह के अन्तिम दिन काशीपुरी में सनातनधर्म की अभूतपूर्व शोभा यात्रा निकली जो अपने ढंग की ऐतिहासिक शोभा यात्रा थी जिस में चारों शंकराचार्य सजे हुये दिव्य वाहनों पर आरूढ़ हुए सब से आगे २ चल रहे थे। कई बग्गिएँ थीं जिन पर विभिन्न सनातनधर्मी नेता विराजमान थे। एक बग्घी पर शास्त्रार्थ महारथी जी अपने दोनों सुपुत्रों शास्त्रार्थ पंचानन श्री प्रेमाचार्य शास्त्री तथा शास्त्रार्थ केसरी श्री वीराचार्य शास्त्री सहित विराजमान थे। सनातनधर्म की अपूर्व विजय से उल्लसित युवकों का समूह इस बग्घी के साथ २ नारे लगाता हुआ चल रहा था। वे नारे भी बड़े ही सामयिक और प्रेरणाप्रद थे। जैसे—दयानन्द दिग्विजय मनोरथ चूर चूर। भाग गया भई ! भाग गया, आर्यसमाज भाग गया,। जीत गया भई जीत गया सनातनधर्म जीत गया। इसके अतिरिक्त धर्म संघ के जयघोष तथा हर हर महादेव की ध्वनि ने पूरे जुलूस को मुखरित रखा। लगभग ६० हजार लोगों ने इस शोभा यात्रा में भाग लिया। इस शोभा यात्रा की चर्चा दूर २ तक हुई। सभी समाचार पत्रों ने इसे अभूतपूर्व कहा। हम ३१-१२-६९ के दैनिक 'भारत' में छपे शोभा यात्रा के विवरण को देकर अपना लेख समाप्त करते हैं। विशेष विवरण हमारे दूसरे लेख में है।

शंकराचार्यों, सनातनियों की अपूर्व शोभा यात्रा

वाराणसी, ३० दिसम्बर। सनातनियों की ओर से आज नगर में एक भव्य शोभा यात्रा निकाली गई जिसमें ज्योतिषपीठ, द्वारिकापीठ एवं पुरी पीठाधीश्वर तीनों जगद्गुरु शंकराचार्य भी सम्मिलित थे।

यह शोभा यात्रा दिन में २ बजे से हरिश्चन्द्र कालेज से, जहां गत सप्ताह भर सनातनियों का विजय महोत्सव चलता रहा, निकली और रात में दुर्गाकुण्ड के समीप आनन्द बाग में उस स्थान पर जाकर सम्पन्न हुई, जहाँ १०० वर्ष पूर्व सुप्रसिद्ध काशी शास्त्रार्थ हुआ था जिसमें स्वामी दयानन्द ने आर्यसमाज की ओर से भाग लिया था।

शोभा-यात्रा में तीनों शंकराचार्य खुली गाड़ी में सिंहासन पर विराजमान थे। एक अन्य गाड़ी पर काशी पीठाधीश्वर श्री महेश्वरानन्द भी थे। जलूस में अनेक कीर्तन मण्डिलयां थी। इनमें महिलाओं के झुण्ड भी थे। कई बग्घियों पर

सनातनी विद्वान् विराजमान थे। इनमें शास्त्रार्थ महारथी श्री माधवाचार्य को देख कर सारे मार्ग भर जनता करतल ध्वनि कर रही थी। काशी में ऐसी शोभा यात्रा बहुत कम अवसरों पर देखने को मिलती है।

मार्ग में शोभा यात्रा पर पुष्प वृष्टि भी हो रही थी। अनेक स्थानों पर स्वागत द्वार बनाये गये थे। मकानों की छतों और बरामदों पर भीड़ भरी थी।

आनन्द बाग पहुँच कर श्री माधवाचार्य ने एक बड़ी पताका फहराते हुए घोषित किया कि यह "दयानन्द मानमर्दिनी" पताका है जो शास्त्रार्थ में सनातनियों के विजय का द्योतक है।

"भारत" ३१-१२-६९

दयानन्द शास्त्रार्थ शताब्दी वाराणसी के दो दृश्य

—मुन्नालाल मालवीय 'भरत', एम० ए०—

वाराणसी दयानन्द काशी शास्त्रार्थ शताब्दी समिति की ओर से दिनांक २५-१२-६९ के आज' पृष्ठ ३ अंक ५ में प्रकाशित वक्तव्य में श्री-महेन्द्र प्रताप शास्त्री ने कहा था—"सौ वर्ष पूर्व महर्षि दयानन्द के सामने काशी के पण्डित मूर्तिपूजा को वेद मन्त्रों से सिद्ध नहीं कर सके थे अब सौ वर्ष के बाद भी विश्व के पौराणिक पण्डितों के सम्मुख आर्यसमाज का वही प्रश्न है और पूर्व घोषणा के अनुसार शताब्दी समारोह स्थल में हम प्रतीक्षा कर रहे हैं कि वे किस समय मूर्तिपूजा अवतारवाद पर शास्त्रार्थ के लिए पधार रहे हैं। शास्त्रार्थ अत्यन्त सद्भावना पूर्ण वातावरण में सौजन्यपूर्वक किया जायगा।"

श्री महेन्द्रप्रताप शास्त्री के उपर्युक्त वक्तव्य को ध्यान में रख कर दयानन्द कालेज के प्रांगण गया।

प्रथम दृश्य

समारोह का सजा हुआ मंच। उसपर विराजमान हैं देश देशांतर से दिग्विजय यात्रा ? कर पधारे हुए आर्यसमाज के विद्वान्। पास ही बैठे हैं श्री प्रेमाचार्य एवं उनके सहयोगी कुछ सनातनधर्म के विद्वान्। माइक पर आर्यसमाज की ओर से घोषणा होती है:—

"सनातनधर्म के कुछ विद्वान् हमसे शास्त्रार्थ करने के लिए मंच पर उपस्थित हुए हैं। उनसे मेरा यह कहना है कि हमारे कार्यक्रम के अनुसार यह शास्त्रार्थ का समय नहीं है। शास्त्रार्थ करने के पहले समय निर्धारण होता है। मध्यस्थ का

चुनाव किया जाता है। शास्त्रार्थ के नियम निर्धारित किये जाते हैं तब शास्त्रार्थ होता है। इस समय शास्त्रार्थ नहीं हो सकता। यह समय शंका समाधान का है। यदि सनातनी विद्वान् शंका प्रस्तुत करना चाहें तो उसका समाधान किया जा सकता है। शास्त्रार्थ नहीं।" (फिर सनातनी विद्वानों की ओर देखते हुए) "बोलिये आप क्या चाहते हैं ?"

श्री प्रेमाचार्य कुछ कहने के लिए माइक की ओर बढ़े। इस पर उन्हें रोकते हुए पुनः माइक पर कहा गया—'नहीं बैठ कर अपनी बात कहिये, जब आप को समय दिया जाएगा तब यहाँ से बोलिये।' श्री प्रेमाचार्य ने अपनी जगह बैठते कुछ कहा जो सुनाई न बन पड़ा क्योंकि माइक दूर था। माइक पर पुनः घोषणा हुई—'सनातनी विद्वान् शास्त्रार्थ न कर शंका समाधान करना चाहते हैं। शंका करने के पहले उन्हें यह जान लेना चाहिए कि शंका करने वाला छोटा होता है। समाधान करने वाला बड़ा होता है। शंका करने वाले को पाँच मिन्ट का समय और समाधान करने वाले के लिये अनिश्चित समय होता है। शंका करने वाले को शिष्टाचार का पालन करना होता है।" (फिर सनातनी विद्वानों की ओर देखते हुए)—"बोलिए आप को यह शर्त मंजूर है।"

सनातनी विद्वानों ने कुछ कहा जो सुनाई नहीं पड़ा। माइक से पुनः कहा गया—'सनातनी विद्वान् कहते हैं हमें आप की शर्तें मंजूर हैं। मैं अब सनातनी विद्वानों से कहता हूं कि एक व्यक्ति माइक के पास आकर अपनी शंका प्रस्तुत करें। इस कार्य का सभापतित्व श्री प्रकाशवीर शास्त्री जी करेंगे।"

इस पर सनातन धर्म की ओर से श्री प्रेमाचार्य जी ने उठ कर कहा :—

"आर्यसमाज के प्रवर्तक स्वामी दयानन्द जी ने मूर्तिपूजा का खण्डन करते हुए पूजा करने वालों को कुम्हार का गधा कहा है। चूहे द्वारा ज्ञान प्राप्त होने से पहले वे भी मूर्तिपूजक थे तथा उनके पिता भी मूर्ति पूजक थे। उनके गुरु भी मूर्ति पूजक थे। तब वे क्या थे ? (इस पर एक आर्यसमाजी ने माइक के पास आकर कहा—आप शंका प्रस्तुत कीजिए भूमिका न बांधिये।) श्री प्रेमाचार्य जी ने कहा—घबड़ाइये नहीं मैं शंका ही कर रहा हूँ, बोलिए वैदिक संध्या के वाक्, वाक्, चक्षुः चक्षुः आदि मंत्र चारों वेदों में से किस वेद में हैं ?' (समय समाप्ति की घण्टी सुनकर श्री प्रेमाचार्य जी बैठ गये।)

आर्यसमाजियों की ओर से श्री ओम प्रकाश शास्त्री ने शंका का समाधान प्रस्तुत करते हुए एक लम्बा व्याख्यान देने के बाद कहा—"वैदिक संध्या का कर्म

वेदोक्त है उसके मंत्र वैदिक हैं या नहीं। इससे क्या मतलब। वैदिक संध्या तो वेदोक्त है।"

इसके बाद सनातनी विद्वान् श्री प्रेमाचार्य जी ने अपने दोनों हाथ ऊपर उठाये हुए कहा—"आप लोगों ने सुन लिया न कि वैदिक संध्या के मंत्र वेदोक्त नहीं हैं पर है वह वैदिक संध्या। हम सनातनी, आर्यसमाज के कथनानुसार अवैदिक मूर्ति पूजा के नाम पर सनातनियों को ठगते हैं और ये आर्यसमाजी विद्वानु वैदिक संध्या के नाम पर—जिसमें वेदों के मंत्र नहीं है—सब आपको ठगते हैं। हम सनातनियों पर यह आरोप किया जाता है कि इनके व्यवहार के कारण लोग ईसाई होते जा रहे हैं। मुसलमान होते जा रहे हैं। मैं आर्य समाजियों से पूछना चाहता हूँ कि—स्वामी जी की स्निग्ध शिष्या रमाबाई दयानन्द के जीवन काल में ही क्यों ईसाइन बन गई थी। श्रद्धानन्द जी के बड़े लड़के गुरुकुल काँगड़ी के प्रथम स्नातक श्री हरिश्चन्द्र क्यों ईसाई बन गए? आर्यसमाजी पहले अपने ही लोगों को ईसाई बनने से रोकें, तब हम सनातनधर्मियों पर आरोप करे।" इसके बाद संस्कार विधि के यज्ञोपवीतम् आदि कुछ मन्त्रों के सम्बन्ध में पूछा—'बोलिए ये मन्त्र किन वेदों से लिए गये हैं?'

इसके बाद श्री ओम प्रकाश शास्त्री ने लम्बा भाषण देने के बाद कहा—'आपने जिन मंत्रों का उल्लेख किया है वे संस्कार विधि में है ही नहीं।'

इस पर श्री प्रेमाचार्य जी पुस्तक हाथ में लेकर माइक की ओर बढ़े। एक आर्यसमाजी ने उन्हें पकड़ कर माइक से दूर हटा दिया। श्री ओम प्रकाश शास्त्री ने माइक पर कहा—"शंका समाधान के लिए आपने निर्धारित समय से अधिक ले लिया। शंका समाधान का कार्य आज यहीं समाप्त किया जाता है। इसके बाद सभापति श्री प्रकाशवीर जी शास्त्री ने उठकर कहा—"आज शंका समाधान का समय खत्म हो गया। हम लोगों के सुबह से रात्रि तक बड़े व्यस्त कार्यक्रम हैं, हमें उनके अनुसार कार्य करना है। फिर कभी जब आप आवेंगे आपको अवसर दिया जायगा' शास्त्रार्थ का अर्थ विद्याध्ययन को बढ़ाते हुए शास्त्र का ज्ञान प्राप्त करना है। पठन-पाठन का क्रम बनाये रखना है। आज की सभा यहीं समाप्त की जाती है।"

यह है गुरुवार का 'गुरु-वार'

और वह भी समस्त भारत से आये हुए पन्द्रह हजार आर्य प्रतिनिधियों के सामने। मैंने अपने मित्र से पूछा—श्री प्रेमाचार्य को रोका क्यों गया? शंका समाधान क्यों रोका गया? मित्र ने कहा—'पराजय के भय से'

द्वितीय दृश्य

दिनाँक २८-१२-६९ समय, सायंकाल, इतवार = एतवार (कीजिए)

महर्षि दयानन्द शताब्दी समारोह का सजासजाया मंच—मंच पर माइक के समीप विराजमान हैं श्री प्रकाशवीर शास्त्री जी—वह कह रहे हैं :—

"सनातनधर्मियों की हठवादिता के कारण मूर्तिपूजा पर शास्त्रार्थ नहीं हो पा- रहा है। उनका कहना है शास्त्रार्थ संस्कृत में लिखित हो। मेरा कहना है शास्त्रार्थ हिन्दी में जबानी हो। आज कल स्टेनोग्राफर हैं जो बड़ी शीघ्रता से भाषणों को लिख सकते हैं। टेप रिकार्ड पर सारे भाषण अंकित किये जा सकते हैं। उनका कहना है शास्त्रार्थ सनातन धर्म के मंच पर हो या अन्यत्र स्थान पर। मैंने उनसे स्पष्ट कह दिया है कि अन्यत्र शास्त्रार्थ करने में व्यर्थ का अनावश्यक व्यय भार पड़ेगा। सनतन धर्म के मंच पर सभी व्यक्तियों के लिए कठिनाई होगी। इसलिए शास्त्रार्थ मेरे मंच पर ही होना चाहिए। यहां शास्त्रार्थ होने से मैं शान्ति और सुव्यवस्था का प्रबन्ध उत्तम रीति से कर सकूंगा। जगद्गुरु शंकराचार्य जी को उच्च आसन पर आदर के साथ विराजमान कराया जायगा। आर्यसमाज की ओर से आज यहाँ हिन्दी में जबानी तथा कल दिन के २ बजे सनातन धर्म के मंच पर संस्कृत में लिखित शास्त्रार्थ की स्वीकृति तथा शास्त्रार्थ के लिए अपने विद्वान् भेजने का निमंत्रण पत्र सनातन धर्म के मंच पर जा चुका है। उसका उत्तर अभी तक नहीं आया। नगर में मोटर से लाउडस्पीकर द्वारा यह प्रसारित कराया जा रहा है कि शास्त्रार्थ के लिए आर्य समाजी विद्वान् सनातन धर्म के विद्वानों का इन्तजार कर रहे हैं पर अभी तक कोई शास्त्रार्थ के लिए नहीं आया। यदि वे लोग आ जायेंगे तो शास्त्रार्थ अवश्य होगा।"

इसके बाद शोक सभा कर अपने एक आर्यसमाजी बन्धु की मृतात्मा के लिए मौन रखकर सभा विसर्जित हुई।

सनातन धर्म के मंच पर आर्यसमाज का पत्र विलम्ब से पहुँचा। वहाँ उसका उत्तर तैयार कराया जा रहा था। तभी मोटर पर लाउड स्पीकर द्वारा उपरोक्त घोषणा होती सुनाई पड़ी। शीघ्र ही कुछ विद्वान् शास्त्रार्थ करने के लिए भेजे गये। अब प्रस्तुत है आगे का दृश्य।

सनातन धर्म के कुछ विद्वानों के साथ हर हर महादेव का नारा लगाती धर्म संघ एवं दयानन्द मतमर्दिनी पताका लिए हुये एक भीड़ आर्यसमाज मंच की ओर बढ़ी। सनातन धर्म के लोग मंच पर चढ़ कर दोनों पताका लहराने लगे। आर्यवीर

दल के लाठी धारी लोगों ने दौड़ कर मंच को चारों ओर से घेर लिया। एक आर्य-समाजी माइक लेकर मंच के एक कोने की ओर भागा और वहीं से घोषणा हुई :—

"आर्यसमाज के विद्वान् मंच पर चले आये। आर्यसमाज के प्रतिनिधि गण पंडाल में शीघ्र आएँ। सनातनी विद्वान् शास्त्रार्थ करने के लिए आ चुके हैं।" थोड़ी ही देर में मंच और पंडाल आर्यसमाजियों से भर गया। काशी की जनता भी पंडाल में बैठ गई। दोनों पक्ष से—'जो बोले सो अभय—स्वामी दयानन्द की जय' तथा 'हर हर महादेव' का नारा लगने लगा। इसी बीच मंच से घोषणा हुई—"शास्त्रार्थ के लिए सनातनधर्मी विद्वानों को भेजने के लिए उनके पंडाल में जो पत्र भेजा गया है उसका उत्तर अभी तक नहीं आया। यदि एक घण्टे के अन्दर उस पत्र का जवाब आ गया तो शास्त्रार्थ ७।३० बजे से शुरू होगा। नहीं तो शास्तार्थ नहीं होगा।"

श्री प्रेमाचार्य जी हाथ में पत्र लेकर हाथ ऊपर उठाए हुए माइक की तरफ बढ़े उन्हें माइक पर बोलने नहीं दिया गया। पत्र लेने के बाद आर्यसमाज की ओर से पुनः घोषणा हुई:—

'पत्र आ गया है। अब शास्त्रार्थ ७-३० जजे शुरू होगा। हमारे आर्यसमाजी बन्धु अब संध्या करेंगे। माइक से संध्या शुरू हुई। सभी लोग शांत रहे। इसी बीच पी० ए० सी० के लाठीधारी जवान बड़ी संख्या में बीच में और पंडाल में यत्र तत्र खड़े हो गए। संध्या समाप्त होते ही दोनों पक्षों से नारेबाजी होने लगी। माइक से कहा गया—"आर्यसमाजी बंधु पंडाल तुरन्त खाली करदें और पुनः सात बजे आवें।" थोड़ी ही देर में सारा पंडाल आर्यसमाजियों से खाली हो गया। पंडाल में रह गई काशी की दर्शनार्थी जनता। मंच पर दोनों पक्ष के लोग डटे रहे। थोड़ी देर बाद पंडाल भरना शुरू हो गया। मंच पर माइक के लिये खिचातानी शुरू हुई। सनातनियों के हाथ में माइक आने पर उसकी लाइन बन्द कर दी जाती और आर्यसमाजियों के हाथों में माइक जाने पर लाईन चालू कर दी जाती। दोनों पक्ष की जनता रह रह कर नारे लगा रही थी। पर सभी अपने स्थान पर बैठे हुए ही। शास्त्रार्थ की तैयारी शुरू हुई। दोनों पक्ष के लोग मंच के दोनों ओर अलग अलग बैठा दिये गए। आर्यसमाज की ओर दो मेज और सनातनधर्म की तरफ एक मेज और एक कुर्सी रखी गई। करीब ८ बजे शास्त्रार्थ महारथी माधवाचार्य जी पंडाल में पधारे। उनके पीछे जनता की भारी भीड़ हर हर महादेव का नारा लगाती हुई आ रही थी। पंडाल में पहुंचते ही हर हर महादेव के नारे से उनका स्वागत हुआ।

श्री माधवाचार्य जी हाथ में बड़ी सी माला लिये हुये थे। मंच पर चढ़ कर उन्होंने स्वामी दयानन्द जी के चित्र को माला चढ़ाई एक आर्यसमाजी ने चित्र पर से माला उतार कर तोड़मरोड़ कर परे फैंक दी। फिर दोनों पक्षों से नारेबाजी हुइ। श्री माधवाचार्य जी ने कहा—'समान आसन समान व्यवहार तथा दोनों तरफ माइक होना चाहिए।' माइक पर एक आर्यसमाजी ने कहा—'दो माइक नहीं एक ही माइक रहेगा। मध्यस्थ जिस के पास माइक ले जायगा वही बोलेगा। मंच पर केवल शास्त्रार्थ करने वाले तथा उनके सात-सात सहायक रहेंगे। मंच पर और कोई नहीं रहेगा। अन्य लोग मंच से नीचे चले जाएं नहीं तो उन्हें उतार दिया जायगा।

सनातनधर्मी माइक के अभाव से कुछ कह नहीं पा रहे थे। आर्यसमाज की ओर से घोषणा हुई—'अब शास्त्रार्थ शुरू होने में दस मिनट का समय शेष है। नगर अधिकारी महोदय दोनों पक्षों के प्रतिनिधियों से बातचात करना चाहते हैं। बातचीत के बाद शास्त्रार्थ शुरू होगा। धीरे-धीरे दस मिनट की जगह आधा घंटा बीता। बीच-बीच में पंडाल में यत्र तत 'हर हर महादेव' की ध्वनि गूंज उठती थी। जनता बड़ी आतुरता से प्रतीक्षा कर रही थी। इसी बीच आर्यसमाज ने नगर रक्षक अधिकारी वर्ग से प्रार्थना की और अनुनय विनय सब कुछ करने पर एक पुलिस अधिकारी ने माइक पर कहा:—अधिकारियों की ओर से यह मजमा गैर कानूनी करार दिया जाता है। सभी लोग पांच मिनट के अन्दर पण्डाल खाली कर के अपने २ घरों को चले जाएं।"

श्री माधवाचार्य जी ने पुलिस अधिकारी से कहा—'यह सभा गैर कानूनी कैसे? हम लोग तो लिखित निमंत्रण पर आये हैं। मैं तो तभी मंच छोड़ूंगा जब सभी आर्यसमाजी मंच खाली कर दें। पुलिस ने आर्यसमाजियों से मंच खाली कराया। 'हर हर महादेव' के नारे के बीच श्री माधवाचार्य जी मंच से नीचे उतरे। जनता उनका जयकार करती 'हर हर महादेव' का नारा लगाती 'दयानन्द मत मर्दिनी पताका' फहराती हुई बाहर निकली। वहाँ उपस्थित जनता तथा पुलिस वालों को भी आर्यसमाजी हार गए, यह कहते सुना गया। शिष्ट नारेबाजी के सिवाय अन्य अप्रिय संघर्ष वहीं हुआ। राजनीतिक सभाओं की तरह यदि अवांछनीय तत्व इसमें सक्रिय हो जाते तो स्थिति की भयंकरता का आप अनुमान सहज लगा सकते हैं। मारी जाती निर्दोष जनता!

इस प्रकार बहु चर्चित, चिरप्रतीक्षित नाटक का शुरू होते ही पटाक्षेप हो गया।

दूसरे दिन समाचार पत्रों में छपे कुछ शीर्षक

पराजय के भय से आर्यसमाजियों द्वारा पुलिस की शरण 'सन्मार्ग'

आर्यसमाजी पण्डाल पर सनातनियों का धावा—शंकराचार्य —एवं करपात्री जी की गिरफ्तारी का षड्यन्त्र, 'गाण्डीव' काशी।

'शान्ति भंग की आशंका से शास्त्रार्थ सभा पर रोक' 'आज' काशी।

पुलिस द्वारा शास्त्रार्थ की अनुमति न देने पर २० हजार से अधिक धर्मावलम्बी जनता की भीड़ ग़ैर कानूनी करार देने पर नगर में एक ओर जहाँ सनातनी जनता में रोष है, वहीं आर्यसमाज के समर्थक राहत की साँस ले रहे हैं। शास्त्रार्थ न होने पर सनातनियों को बहुत दुःख हुआ और उसे उन्होंने आर्यसमाज की पराजय के रूप में लिया...आज दिन में २ बजे आर्यसमाजी शास्त्रार्थ के लिए सनातनी मंडप में नहीं आए।' 'भारत' प्रयाग

यह है इतवार को मिले निमंत्रण पर एतबार कर जाने का परिणाम इस पर एतबार कीजिये। सादर निमन्त्रित कर पुलिस बुलाने की घटना सुनने पर इतबार नहीं होता पर प्रत्यक्षदर्शी होने से, इस घटना का विवरण पाठकों के समक्ष रखना पड़ रहा है। मुझे एक नागरिक की बात भूलती नहीं। उपर्युक्त कांड के पहले ही उसने कहा था—"आर्यसमाज और सनातन धर्म में क्या मुकाबला ? समाज कहीं सनातन धर्म से शास्त्रार्थ कर सकता है ?

दिल्ली में मूर्तिपूजा का शास्त्रार्थ

मन्त्री—सनातनधर्म मण्डल, दिल्ली

मुझे विदित हुआ कि देवनगर नई दिल्ली आर्यसमाज ने 'मूर्तिपूजा' के विषय में शास्त्रार्थ का एक चैलेंज छपवाया है। हमने भी उत्तर में जोरदार विज्ञापन छपवाया, और उन्हें शास्त्रार्थ की चुनौती दी और हम २३-११-६९ रविवार को उनकी सभा में पहुंच गए।

शास्त्रार्थ का विवरण

शास्त्रार्थ में पं० श्री दीनानाथ शास्त्री सारस्वत संरक्षक थे और श्री बाल कृष्ण धर्मालङ्कार प्रधान थे तथा पं० रामेश्वराचार्य शास्त्रार्थ कर्त्ता थे।

श्री अमरस्वामी के प्रश्न

(१) श्रीमद्‌भागवत पुराण में मूर्तिपूजा का खण्डन किया गया है। यथा—'न ह्यम्मयानि तीर्थानि न देवा मृश्शिलामयाः' अर्थात् - तीर्थ जलमय नहीं होते, देवता मट्टी पत्थर के नहीं होते। तथा—

'यस्यात्म बुद्धिः कुणपे त्रिधातुके, स्वधीः कलत्रादिषु भौम इज्यधीः।

यत्तीर्थ-बुद्धिः सलिले न कर्हिचिद्, जनेष्वभिज्ञेषु स एव गोखरः।'

अर्थात्—जो शरीर में आत्मा बुद्धि करता है, स्त्री पुत्रादि में यह मेरी इस प्रकार स्वबुद्धि करता है, जल में तीर्थ बुद्धि करता है। जो पृथ्वी की मूर्ति में पूजा बुद्धि करता है, वह गधा है।

(३) मूर्ति ब्रह्मा की पूजी जावे, या विष्णु की, या शिव के लिङ्ग की। (उपस्थ की) पूजा भी जाए?

(४) राधा कृष्ण की पूजा भी की जाती है, ब्रह्म - वैवर्त पुराण के अनुसार राधा कृष्ण की मामी थी, श्रीकृष्ण ने उसे रख लिया, यह वभिचार है। तब उन की पूजा व्यभिचार को बढ़ावा है।

(५) वेद में मूर्तिपूजा का नाम नहीं बल्कि 'न तस्य प्रतिमा अस्ति यस्य नाम महद्यशः' यहां वेद में मूर्तिपूजा का निषेध किया गया है।'

श्री रामेश्वराचार्य के उत्तर—

एक आप जैसा मौलवी था। उसने कहा एक प्रसिद्ध मौलवी ने यह फतवा दे रखा है—'मत पढ़ो निमाज।' मुसलमान हैरान थे। तब एक सयाने मुसलमान ने कहा—'मुझे दिखलाओ कहां लिखा है, देखा तो वहां लिखा पाया—'मत पढ़ो निमाज जब हो नापाक, महाशय जी का भी यही हाल है। आपने भी यहाँ मियां वाला तरीका अपना कर जनता को गुमराह किया है। महाशय! श्रीमद्‌भागवत पुराण में तो मूर्तिपूजा ठसाठस भरी पड़ी है। आपने उक्त दोनों श्लोकों में शब्द और अर्थ की चोरी की है।

(१) देखिये आपका पहला श्लोक—'नह्यम्मयानि तीर्थानि' इसका उत्तार्ध था—'ते पुनन्त्युरुकालेन दर्शनादेव साधवः' अर्थात् - तीर्थ तथा देवमूर्तियाँ तो देरी से पवित्र करते हैं, पर साधु लोग तो तत्क्षण ही पवित्र करते हैं। यहां मूर्तियों को देरी से पवित्र करने वाला कहा है। सो यहां साधु की प्रशंसा का अर्थवाद है। इसमें मूर्तिपूजा खण्डन कहां आया? इसी लिए तो आपने उत्तरार्थ की चोरी की। यहां तो यह भाव है कि मूर्ति की पूजा भी करो, और साधुओं का आदर भी करो।

'अश्मा च मृत्तिका च मे . . . . सिकताश्च मे वनस्पतयश्च मे, हिरण्यं च मे, अयश्च मे . . . .यज्ञेन कल्पन्ताम्' (यजु०) । इस मन्त्र का 'यज्ञ' शब्द — जिस में हेतु में तृतीया विभक्ति है —'यज्' धातु से बनता है । यज्ञ धातु का अर्थ होता है देवताओं की पूजा आदि । सो देवपूजा पत्थर में भी, मृत्तिका में भी, बालू की मूर्ति में भी, काठ व सोना चाँदि आदि की मूर्ति में भी हो सकती है । अब महाशय जी को जो मूर्ति इन में पसन्द हो उसी में सर्वव्यापक देव की सत्ता मानकर उसी में देवपूजात्मक-यज्ञ कर सकते हैं, बेड़ा पार हो जाएगा ।

'महादेव, विष्णु आदि भी उसी इन्द्र परमात्मा के रूप हैं, अतः उनकी भी मूर्ति में पूजा हो सकती है । जिस रूप में जिस की श्रद्धा हो, वह 'योयच्छ्रद्धः स एव सः' गीता के वचन के अनुसार पूजा कर सकता है । शिवलिंग पूजा उपस्थ पूजा नहीं है । यह आर्यसमाज के प्रसिद्ध स्व० श्री बुद्धदेव जी विद्यालङ्कार स्वामी सम्पूर्णानन्द जी भी मान चुके हैं, यह आर्यसमाज के 'परोपकारी' एवं टङ्कारापत्रिका में भी उनका लेख छप चुका है ।

(४) राधा कृष्ण में भी जो आप राधा को ब्रह्म-वैवर्त-पुराण के अनुसार श्रीकृष्ण की 'मामी' कहते हैं यह भी आपने पुराण की चोरी की है । वहाँ लिखा है—'स्वयं राधा हरेरेका छाया रायण कामिनी' अर्थात् राधा, भगवान् की नित्य शक्ति है, वह भगवान् के अंक में (सदा साथ) रहती है, और जो श्रीकृष्ण के मामा रायाण की स्त्री है, वह उस राधा की छाया है । यशोदा श्रीकृष्ण की माता नहीं थी, किंतु पालने वाली थी, अतः उसका भाई रायण भी श्रीकृष्ण का वास्तविक मामा नहीं था, किंतु औपचारिक था । यह महाशय जी ने अपनी अन्तिम टर्न में कहा था, हमें बोलने का समय नहीं दिया गया।

आप वेद को परमात्मा का ज्ञान मानते हैं, तो बताइये कि ज्ञान निराकार होता है या साकार ? यदि कहें कि ज्ञान या अक्षर निराकार हैं, तब आपने उसे साकार करके उसके चार मन्दिर बना दिये । चार वेद पुस्तकें बना दीं । उन चार मन्दिरों की अक्षर मुर्तियों का आप सम्मान करके स्वयं मूर्तिपूजा को कर रहे हैं, जब आप भगवान् की मनसा परिक्रमा' के छः मन्त्रों से निराकार सर्वव्यापक की परिक्रमा कर रहे होते हैं, यह मूर्तिपूजा ही तो है । वेद में भी 'नमस्तेस्तु अश्मने, यह पत्थर को भी नमस्कार आई है, उसमें भी यही आशय है । पत्थर में स्थित व्यापक शक्ति को हम नमस्कार कर रहे होते हैं ।

महाशय जी अन्त तक भी इसका खण्डन नहीं कर सके । यह प्रतिपक्षी की प्रथम

पराजय है। (२)अब दूसरे श्लोक की चोरी देखिये--आपने 'न कर्हिचिद् जनेष्वभिज्ञेषु' ाक अर्थ नहीं किया। इसका यह भाव है कि जिस पुरुष की शरीर में तो आत्मबुद्धि है, पर विद्वान् लोगों में आत्मबुद्धि कभी नहीं कि यह भी हमारे हैं। अपनी स्त्री में तो अपनीयत की भावना है, पर विद्वानों में आत्मीयता की भावना कभी नहीं कि— विद्वान् भी अपने हैं। जो जल में तो तीर्थ बुद्धि रखते हैं; पर विद्वानों में तीर्थबुद्धि कभी नहीं करते कि—यह भी तीर्थ हैं। जो पत्थर की मूर्तियों का तो पूजा सम्मान करने हैं; पर विद्वानों का पूजा-सम्मान कभी नहीं करते; वे गोखर हैं अर्थात् निन्दित हैं। यहाँ यदि 'गोखर' का अर्थ 'गधा' किया जावेगा। तब मूर्तिपूजक स्वामी द० जी के पिता तथा उनके लड़के दयानन्दजी क्या बन जावेंगे—यह सम्बन्ध आप स्वयं समझ सकते हैं। यहाँ तो मूर्तिपूजा तथा विद्वानों की पूजा इस प्रकार दोनों का सम्मान कहा हैं। यहाँ मूर्तिपूजा का खण्डन कहाँ है? यहाँ महाशय जी ने 'न कर्हिचिद् जनेषु अभिज्ञेषु इज्यधी:' इस वाक्य के शब्दों की एवं अर्थ की चोरी की है, जिसका अर्थ था कि—'जो विद्वानों में पूजादि व्यवहार कभी नहीं' 'न कर्हिचिद् करते। जो वाणी की चोरी करे, मनु जी ने उसे सब वस्तुओं का चोर कहा है। हो गया आपके आक्षेपों का समाधान।

हमारे इस समाधान का अन्त तक भी खण्डम महाशय जी नहीं कर सके। आर्यसमाजी पक्ष का यह द्वितीय पराजय है।

(३) जो कि आपने कहा है कि—मूर्ति किसकी बनती है; इसपर वेद में कहा है—'इन्द्रो मायाभि: पुरुरूप ईयते' (ऋग्वेद। इसमें—'इन्द्रं मित्रं' मन्त्र के अनुसार 'इन्द्र' परमात्मा का नाम है। उसे 'पुरुरूप' कहा है—'पुरुरूप' का अर्थ है—बहुत रूपों वाला। जब ऐसा है तो उस परमात्मा की मूर्तियां भी बहुत रूपों वाली बन सकती है। वेद में भी इसका संकेत आया है:—

'संवत्सरस्य प्रतिमां यां त्वा रात्रि! उपास्महे।
सा न आयुस्मतीं प्रजा रायस्पोषेण संसृज॥'

इस वेद मन्त्र में रात्रि को संवत्यरकी प्रतिमा बताया गया है और उसकी उहासना कही गई है, और उससे अपनी सन्तान की आयु और धन वस्त्र की प्रार्थना की गई है। इसमें मूर्तिपूजा वैदिक सिद्ध हो गई न!

( ) 'नतस्य प्रतिमा अस्ति' यहाँ प्रतिमा का अर्थ 'मूर्ति' नहीं है। स्वा० दयानन्द जी ने भी ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका मेंलिखा है कि- वेद में 'प्रतिमा' शब्द तो आया है। पर वहाँ 'प्रतिमा का अर्थ 'मूर्ति' नहीं होता किंतु परिमाण वा तुल्यता अर्थ है।

(शेष पृष्ठ ७३ पर)

विजयमहोत्सव मञ्च से—

सनातन-धर्मी नेताओं के प्रेरणा-प्रद उद्घोष

(श्री भक्त रामशरण दास द्वारा समाचार पत्रों से तदुक्त शब्दों में संकलित)

वाराणी में स्वा० दयानन्द १०० बर्ष पहले पराजित

—स्वामी करपात्री जी—

काशी सदा से ही अजेय रही है और आज भी यह अजेय ही है। इतिहास से यह स्पष्ट विदित होता है कि काशी में कई शास्त्रार्थों में स्वामी दयानन्द जी विद्वानों से पराजित हुए थे। काशीराज की अध्यक्षता में भी वे मूर्तिपूजा के शास्त्रार्थ में हारे थे। अत एव मूर्तिपूजा का प्रसार तथा नये २ मन्दिरों का निर्माण उत्तरोत्तर बढ़ ही रहा है। (गाण्डीव, दैनिक—वाराणसी, २३, १२, १९६९)

विधर्मियों से हिन्दुत्व की रक्षा के लिये एकता आवश्यक

—द्वारका पीठ के श्री शंकराचार्य जी—

लाखों वर्षों से प्रचलित मूर्ति पुजा का कोई खण्डन करे तो बहुत बुरी बात है। मूर्ति पूजा का खण्डन हो ही नहीं सकता। सभी देशों में वहाँ के मन्दिरों में शिवलिंग हैं। क्या वे अन्य देश वाले मूर्ख थे? उन्होंने परमात्मा की पूजा के लिए ही शिवलिंग बनाया था। अब समय आ गया है कि हिन्दू धर्म की सुरक्षा के लिए हम सन्नद्ध हों और धर्म की रक्षा के लिए सभी प्रकार के बलिदान के लिए तत्पर रहें। 'सन्मार्ग' (२८-१२-१९६९)

आर्यसमाजी मान गये कि मूर्ति में भगवान् हैं

स्वामी करपात्री जी महाराज ने कहा कि काशी भगवान् ज्योतिर्लिङ्ग विश्वनाथ का धाम है। सब ज्योतियों—सूर्य, अग्नि, चन्द्र, चक्षु, मन आदि को भी ज्योति देने वाला भगवान् का स्वरूप यह काशी है। काशी के कंकड़ भी शंकर के समान हैं। सारा विश्व प्रपंच भगवान् से उत्पन्न होता है, उसी से पलता है और उसी में लीन होता है। यही कारण है कि आज के शंका समाधान में आर्यसमाजी विद्वान् म० रुद्रदत्त आर्योपदेशक यह मान गये कि मूर्ति में भगवान् हैं। फिर जब उस मूर्ति की हम पूजा करते हैं तो उन्हें क्यों कष्ट होता है? 'सन्मार्ग' (२८ १२-१९६९)

दस हजार का पुरस्कार

शास्त्रार्थ महारथी श्री माधवाचार्य जी ने आर्यसमाजियों को चुनौती दी कि यदि वे यह सिद्ध कर दें कि वेद में मूर्तिपूजा का खण्डन किया गया है तो हम हथियाराम मठ की घोषणा के अनुसार उन्हें दस हजार रुपये का पुरस्कार देने को तैयार हैं। आपने आर्यसमाजियों पर कटाक्ष करते हुए कहा कि मैं इन्हें पचास वर्षों से जानता हूँ। हमारे पण्डित विनय की मूर्ति है, वे इनके पाखण्ड को समझ नहीं पाते। जब उन्होंने शास्त्रार्थ की चुनौती दी है तो वे शास्त्रार्थ क्यों नहीं करते ?

'सन्मार्ग' (२७-१२-१९६९)

बोध का कारण चूहा

श्री नन्दलाल शास्त्री ने कहा कि—दयानन्द जी को शास्त्र के बल पर कोई बोध नहीं हुआ अपितु चूहे के कारण हुआ है। आर्यसमाज के पास कोई दर्शन ग्रन्थ नहीं है। जब मनुष्य भगवान् का चिन्तन करता है तब उस निराकार परमेश्वर का कोई न कोई स्वरूप बनता ही है वही स्वरूप मूर्तिपूजा के रूप में है।

वर्ण भेद के बिना हिन्दू धर्म का अस्तित्व न रहेगा

—जगद्गुरु श्री शंकराचार्य (पुरी पीठ)

आर्यसमाज के समारोह में गत रात श्री चरण सिंह द्वारा दिये गये वक्तव्य की टीका करते हुये शंकराचार्य जी ने कहा कि विदेशमंत्री श्री दिनेश सिंह के चाचा ब्रजेश सिंह ने तीन पतियों को तलाक देने वाली तानाशाह स्तालिन की पुत्री स्वेतलाना से विवाह करने के लिए मुसलमान बनना कबूल किया था। जब श्री ब्रजेश सिंह को रूसियों ने स्वेतलाना से विवाह करने की छूट इस आधार पर नहीं दी कि हिन्दू एक पत्नी के रहते दूसरी औरत से विवाह नहीं कर सकता तो उन्होंने लिखित रूप से यह स्पष्ट किया कि मैं मुसलमान धर्म कबूल करता हूँ। इसलिए उनकी रियासत काला कांकर पर अपना अधिकार लेने स्वेतलाना भारत आई थी। फिल्म अभिनेत्री शर्मिला टैगोर को पढ़े लिखे युवक तथा अन्य हिंदू काफी स्नेह करते थे, फिर उसे किसने मुसलमान बनने दिया ?

हरिजनों से तो हमारा सम्बन्ध जन्म से मृत्यु तक है। हमारा कोई भी कार्य उनके बिना नहीं चल सकता। बिना वर्ण भेद के तो हिंदुत्व का ही अस्तित्व न रहेगा।

'सन्मार्ग' (२७-१२-१९६९)

काशी नगरी की रग रग में वेद विद्या

पं० राजनारायण शास्त्री (काशी] ने कहा कि समाजी अपनी जिद्द पर अड़े रहते हैं। इसका कोई उत्तर नहीं। यदि कोई वास्तविक शास्त्रार्थ करना चाहे तो और बात है। काशी नगरी की रग २ में वेद विद्या और धर्म प्रवाहित होता रहता है।

'सन्मार्ग' (२७-१२-१९६९)

हारने पर नाक कान काट दी जाए

शास्त्रार्थमहारथी श्री माधवाचार्य जी ने कहा कि समाजियों की सन्ध्या तथा हवन के मन्त्र उनकी चार शाखाओं में नहीं हैं। वे उसी पर शास्त्रार्थ करलें और यदि वे हमें पराजित कर देंगे तो हम उन्हें सारी सम्पत्ति दे देंगे। सन् १९२८ में नैरोबी (अफरीका) में हुए हमारे शास्त्रार्थ में एक मुसलमान ने मध्यस्थता की थी। और आर्यसमाजी वहाँ हारे थे। मुस्लिम मध्यस्थता में निर्णय हो चुका है कि मूर्तिपूजा में सनातन धर्मी पण्डितों का सिद्धांत वेदानुकूल और उचित है। वायु के समान सन्त महात्माओं के समक्ष आर्यसमाजी मच्छर के समान हैं। अब रुपये की बात पर शास्त्रार्थ नहीं होगा। अब तो यदि शूर्पणखा के समान हारने पर उन की नाक कान काट दी जाये तब वह पुन; सामने नही आ सकेंगे।

'सन्मार्ग' (२७-१२-६९)

आर्यसमाज के मंच पर मूर्तिपूजा का प्रतिपादन

कल सायं दयानन्द कालेज में चल रहे महर्षि दयानन्द काशी शास्त्रार्थ शती समारोह के मण्डप में आर्यपन्थियों और सनातनी विद्वानों में मूर्तिपूजा पर अधूरा शास्त्रार्थ हुआ। उस समय पण्डाल में काफी उत्तेजना फैल गई।

शास्त्रार्थ की झलक उस समय देखने को मिली जब सनातन पंथी शास्त्रार्थ पञ्चानन श्री प्रेमाचार्य, आर्यपन्थी पण्डाल में सदल बल पहुँच गए और उन्होंने आर्य पंथियों से तर्क वितर्क करना शुरू कर दिया। दयानन्द कालेज में हुए अल्प एवं अधूरे शास्त्रार्थ के समय इतनी सरगर्मी पैदा हो गई कि पी. ए. सी. एवं पुलिस वाले भी किसी गम्भीर स्थिति का सामना करने के लिये तैयार हो गए थे।

'सन्मार्ग' (२७-१२-१९६९)

मूर्ति पूजक गधे तो स्वा० दयानन्द और उनके पिता कौन ?

शास्त्रार्थ पञ्चानन श्री प्रेमाचार्य ने कल सायंकाल आर्यसमाज के मंच पर

हुए अपने शास्त्रार्थ का वर्णन प्रस्तुत करते हुये कहा कि रमाबाई दयानन्दजी के जीवन काल में ही ईसाई बन गई थी। स्वा० श्रद्धानन्द जी के लड़के हरिश्चन्द्र ईसाई बन गये। आर्यसमाज पहले अपने लोगों को ईसाई बनने से रोके। फिर हमारे ऊपर आरोप लगाए। हमने उनसे पूछा कि आप की सन्ध्या के मन्त्र किस वेद में हैं ? वे उत्तर नहीं दे पाए।

दयानन्द जी ने मूर्तिपूजा का खण्डन करते हुये कहा है कि मूर्तिपूजा करने वाले कुम्हार के गधे हैं। स्वयं स्वा० दयानन्द भी पहले मूर्तिपूजा करते थे। उनके पिता तो मूर्तिपूजक थे ही । अतः लिखते समय उन्होंने यह ध्यान नहीं दिया कि वह अपने पिता को भी गधा कह रहे हैं।

'सन्मार्ग' 'आज' (२६-१२-१९६९)

मूर्तिपूजा और अवतारवाद वेद सम्मत

पुरी और बदरिकाश्रम के शंकराचार्यों, स्वा० करपात्री जी, श्री माधवाचार्य, श्री प्रेमाचार्य तथा अन्य सनातनी विद्वानों ने मुख्य रूप से शंकाओं का समाधान किया और मूर्तिपूजा तथा अवतार वाद को वेद सम्मत सिद्ध किया।

पुरी के जगद्गुरु शंकराचार्य ने कहा कि—परमात्मा का वागात्मक स्वरूप वेद है। जिसकी हम उपासना करते हैं वह नित्य ही होगा। अनित्य की उपासना नहीं की जाती। हमारे शास्त्रकारों ने वेद के अपौरुषेयत्व को सिद्ध करते हुए पौरुषेय का लक्षण भी प्रतिपादित किया है। मूर्तिपूजा के सम्बन्ध में आपने कहा स्वा० दयानन्द जी भगवान् की प्रार्थना करते हुए कहते हैं कि तुम मेरे भोजनों को मत चुराओ। आपने पूछा कि चुराता कौन है ? निराकार या साकार ?

स्वा० करपात्री जी ने कहा कि आर्यसमाजी कहते हैं सनातन धर्म के कारण देश का बंटवारा हुआ। मेरा यह कहना है कि जब से आर्य समाजी पैदा हुए उसके बाद देश बँटा। महात्मा गांधी ने भी कहा है कि दयानन्द जैसे व्यक्ति के 'सत्यार्थ प्रकाश' से फूट पड़ी।

आज रूस साम्यवादी और अमेरिका पूंजीवादी होते हुए भी सह अस्तित्व की बात मान कर एक प्लेटफार्म पर परमाणु बम जैसे भयंकर संहारक अस्त्र-शस्त्र पर अंकुश लगाने की बात कर रहे हैं। फूट का बीज बोने वाला आर्यसमाज संसार में फूट डालने का प्रयास कर रहा है।

आपने कहा कि वेद के आधार पर ही हम गंगा, गीता और गाय का आदर करते हैं। भागवत सम्पूर्ण उपनिषदों का सार हैं। गौतम सूत्रों पर वात्स्यायन का

भाष्य प्रमाण माना है। गौतम सूत्र में लिखा है कि ब्राह्मण भाग का ही परम प्रामाण्य है। इसी आधार पर पुराणों को भी प्रमाण सिद्ध किया गया है। ब्राह्मण अविच्छिन्न परम्परा से वेद सिद्ध होते हैं। परम्परा के आधार पर मन्त्र को मन्त्र और ब्राह्मण को ब्राह्मण कहा गया है। कात्यायन ऋषि ने ब्राह्मण को वेद माना है। अथर्व वेद के मन्त्र में पुराण शब्द आया है। वेद का ब्राह्मण भाग राजा है और मन्त्र भाग उसके नियन्त्रण में रह कर काम करता है। जितने कर्म हैं सब ब्राह्मण भाग के आदेश हैं। वेद का फल यज्ञ है, वह बिना ब्राह्मण भाग के बन ही नहीं सकता। उपनिषद् वेदों का निर्णीत सिद्धान्त है। उसे वेद का शीर्ष भाग कहते हैं। कुछ मन्त्रोपनिषद् और कुछ ब्राह्मणोपनिषद् हैं। वेद मन्त्रों में यहां तक है कि सारा संसार भगवान् की मूर्ति है।

मूर्तिपूजा का खण्डन साक्षात् भगवान् का खण्डन

समारोह के अध्यक्ष पद से ज्योतिष्पीठ के शंकराचार्य श्री स्वा० कृष्ण-बोधाश्रम महाराज ने कहा कि काशी में आकर मूर्ति पूजा का खण्डन करना साक्षात् भगवान् का खण्डन करने के समान है। इससे बढ़ कर और क्या पाप हो सकता है? आपने कहा कि सनातन धर्म तो बहुत सूक्ष्म भाव लेकर निर्णय करता है। काशी का निर्णय सारे संसार को मान्य होता है।

इस अवसर पर शास्त्रार्थ महारथी श्री माधवाचार्य ने आर्य समाजी नेताओं द्वारा उठाये गये अनेक प्रश्नों का उत्तर दिया। आपने कहा कि सौ वर्ष पूर्व दयानन्द जी ने प्रश्न किया था कि वेद में मूर्तिपूजा कहां लिखी है? इस पर उत्तर में श्री ताराचरण ने उनसे पूछा कि वेद में जो बात लिखी है वही प्रमाण है इसकी प्रमाणिकता क्या है? तो उन्होंने (दयानन्द ने) पुराणों का सहारा लिया और कहा कि मनु स्मृति महाभारत आदि में है। आपने पूछा कि जब आर्य समाजी ईश्वर को सर्वव्यापक मानते हैं तो पत्थर की मूर्ति में उसे क्यों नहीं मानते?

आपने उत्तर प्रदेश के आर्योपदेशक श्री शंकर दयाल आर्य द्वारा पुनर्जन्म और पिण्ड दान के औचित्य पर की गई शंकाओं का समाधान किया और कहा कि स्थूल शरीर नष्ट हो जाने पर भी आत्मा सूक्ष्म शरीर के साथ विद्यमान रहती है और पिण्ड दान से इसी सूक्ष्म शरीर को सन्तुष्टि प्राप्त होती है। आपने कहा कि अब तो आधुनिक विज्ञान से भी पुनर्जन्मवाद की पुष्टि हो चुकी है और दुनिया भर में ऐसे बहुत से लोग हैं जो दिवंगत आत्माओं का आवाहन कर उनसे बातचीत भी कराते हैं।

'आज' (२५-१२-१९६९)

सनातन धर्म तर्क संगत

श्री प्रेमाचार्य जी ने कहा कि—सनातन धर्म की परम्पराएँ तर्क संगत और व्यवहार आदि से पूर्ण सिद्ध हैं। हमारे में से ही निकला हुआ आर्यसमाज एक वर्ग है जिसके कुतर्कों के प्रचार से ईसाई और मुसलमान बनने की प्रेरणा मिलती है। वह जिन सिद्धान्तों का नाम लेते हैं उनसे हमें खतरा है। आर्यसमाज कहता कुछ और करता कुछ है। शुद्ध आस्तिक वे हैं जो वेदशास्त्र, पुराण को मानते हैं, दूसरे नास्तिक हैं और तीसरे आधे आस्तिक, आधे नास्तिक होते हैं। ऐसों में से ही यह आर्य समाज है। ईश्वर सर्वव्यापक है ऐसा आर्यसमाज मानता है पर वह मूर्ति में ईश्वर को नहीं मानता। यदि ईश्वर सर्व शक्तिमान् है तो अवतार क्यों नहीं ले सकता ?

'आज' (२५-१२-१९६९)

प्रसिद्धि भी प्रमाण

पं० विश्वनाथ दातार ने वेद के अपौरुषेयत्व की व्याख्या करते हुए न्यायिक, मीमांसा आदि का समन्वय किया। वेद शब्द की प्रसिद्धि मन्त्र, ब्राह्मण तथा उपनिषदों में सृष्टिकाल से लेकर अभी तक जब जीवित हैं तो उस प्रसिद्धि को भी वेदार्थ निर्णय में प्रमाण मानना ही होगा। ब्राह्मण वेद नहीं है इसका कहीं कोई प्रमाण नहीं मिलता।

'आज' (२५-१२-१९६९)

संस्कृत विश्वविद्यालय के न्याय विभागाध्यक्ष श्री बदरीनाथ शुक्ल ने कहा कि हमें अपने धर्म में श्रद्धा करनी चाहिए। बिना पुराणों के सहारे राम, कृष्ण, ध्रुव, प्रह्लाद का पता कैसे चलेगा ?

'आज' (२५-१२-६९)

सनातन धर्म की ओर से भारी पुरस्कार की घोषणा

हथियाराम मठ के महन्त महामण्डलेश्वर श्री विश्वनाथ यति जी महाराज ने घोषणा की कि आर्यसमाज के जो भी मनीषी सनातन धर्म के मंच पर आ कर अपने तर्क और युक्ति से यह सिद्ध कर देंगे कि मूर्तिपूजा या अवतारवाद वेद विरुद्ध है और सनातनी पण्डित वर्ग अपनी हार मान जाएगा तो उसे मैं अपनी ओर से दस हजार रुपये का पुरस्कार दूंगा।

शास्त्रार्थ महारथी श्री माधवाचार्य ने भी गुरुवार को सनातन धर्म के मंच से घोषणा की कि जो आर्यसमाजी मेरे पाँच प्रश्नों का उत्तर देंगे उन्हें प्रति प्रश्न एक एक हजार रुपया पुरस्कार दिया जायगा। उनके पांचों प्रश्न निम्नलिखित हैं—

१. आर्यसमाज की वैदिक सन्ध्या में जो 'वाक् वाक् चक्षुः चक्षुः' मन्त्र लिखा है वह चारों वेदों में से कौन से वेद का है ?

२. 'यज्ञोपवीतं परमं पवित्रं' आदि मन्त्र कौन से वेद में है ? जिससे आर्य समाज सब के गले में यज्ञोपवीत डालता है।

३. सत्यार्थ प्रकाश में भागवत के नाम पर एकादश समुल्लास में कथा लिखी है कि प्रह्लाद मूर्ख था हिरण्यकशिपु ने लोहे का स्तम्भ आग में तपा कर कहा कि इससे चिपट जा, यदि तेरा नारायण सच्चा होगा तो नहीं जलेगा। प्रह्लाद को शंका हुई कहीं जल न जाऊं नारायण ने उस पर चींटियों की पंक्ति चला दी। यह कथा भागवत में कही नहीं है।

४. हिरण्याक्ष पृथिवी को चटाई की भाँति लपेट कर सिरहाने धर कर सो गया। यह कथा भी भागवत के नाम पर लिखी है। दिखावें ?

५. 'सुखमणी' नामक ग्रन्थ के नाम पर 'वेद पढ़त ब्रह्मा मरे' आदि पद्य लिखा है। वहाँ दिखावें तो एक सहस्र पुरस्कार।

'आज' (२६-१२-१९६९)

धर्मरक्षा से ही राष्ट्र रक्षा

श्री राजकुमारी प्रभावती राजे ने कहा कि हमारे मन्दिरों, शिक्षा और संस्कारों पर जो आघात हो रहा है, उसका हमें डट कर सामना करना होगा। तभी यह राष्ट्र बच पायेगा।

आज हमारी वर्णमाला में से 'ग' 'गणेश' को निकाल दिया गया है। गो० तुलसीदास ने मंगला चरण कर रामचरित मानस की रचना की आज उसी गणेश को निकाल कर उनके स्थान पर 'गदहा' की स्थापना की गई है। गणेश साम्प्रदायिक हैं और गदहा जी समन्वयवादी हैं। यह तो आज देश की विचारधारा की विडम्बना है।

'आज' (२८-१२-१९६९)

संन्यास ग्रहण कर लूँगा यदि...

श्री रामेश्वराचार्य शास्त्री ने कहा कि भारतीय संस्कृति, भगवद्भक्ति, मूर्ति पूजा धर्म से जो हमें हटाता है वह ईसाइयत को फैलाता है। हमारी धार्मिक और सांस्कृतिक एकता को अक्षुण रखने के लिए आदि गुरु शंकराचार्य ने बड़े ही मनोवैज्ञानिक ढंग से चारों पीठों की स्थापना की थी। यदि आज ये पीठ न होते तो हमारी राष्ट्रीय एकता टूट गई होती। आर्य समाज वाले चार ही वेदों को मानते हैं

और वे पूछते हैं कि वेद में (चार संहिताओं में) मूर्ति पूजा कहाँ है ? लेकिन मैं उनसे यह प्रश्न करता हूँ कि उनके अनुयायी संन्यासी किस वेद के आधार पर बनते हैं ? और गैरिक वस्त्र पहिनते हैं। क्या वे अपने मान्य चारों वेदों में कहीं 'संन्यास' शब्द लिखा बतायेंगे ? यदि बतायें तो मैं इसी काशी नगरी में संन्यास ले लूँगा।

'आज' (२८-१२-१९६९)

गलत मार्ग छोड़ो

श्री प्रेमाचार्य ने कहा कि अनादि काल से चले आने वाले सनातन धर्म के सिद्धान्त बुद्धिग्राह्य तथा परम कल्याण करने वाले हैं। रामेश्वराचार्य पहले आर्य समाज के चक्कर में थे। वहाँ के सत्य ? का साक्षात्कार करके वे यहाँ सनातन में आ गये और उन्हें महसूस हो गया कि वे भूल से गलत मार्ग पर चले गये थे। गलत मार्ग पर चलने वाले को ज्ञान होने पर उस मार्ग को छोड़ देना चाहिए। हिन्दू धर्म और मन्दिरों ने देश की एकता को कायम रखा है। मूर्तिपूजा का विरोध कर देश की एकता को छिन्न-भिन्न करने का प्रयास किया गया है। 'आज' (२८-१२-६९)

ब्रह्म की प्राप्ति मूर्ति द्वारा ही

श्री भयंकरानन्द ने अपने भाषण में कहा कि आर्यसमाज वाले साक्षात् ब्रह्म को नहीं मानते, किन्तु यह ब्रह्म की प्राप्ति मूर्ति द्वारा ही तो होती है।

'आज' (२८-१२-६९)

आया नहीं हूँ, लाया गया हूँ

अजमेर के स्वामी मनोहरदास जी ने कहा कि वेदान्तदर्शन हमें परमात्मा की पहचान करवाता है। हम अपने स्वरूप को पहचानें। इस शरीर से हमारी दोस्ती हो गई है। वेदान्त जीव को इस दोस्ती से विरक्त करता है। 'मैं संसार में आया नहीं हूं लाया गया हूं। इन खिलौनों को देकर बहलाया गया हूं। 'आज' (२६-१२-६९)

दयानन्दी गुमराह करते हैं

सांख्य योग वेदान्त सम्मेलन के अध्यक्ष श्री स्वा० परमानन्द सरस्वती जी ने कहा कि सांख्य के रचयिता महर्षि कपिल भगवान् के अवतार हैं जिन्होंने हमें एक दर्शन दिया। दयानन्दजी ने भी कपिल को यह नहीं कहा कि वे भगवान् नहीं थे। दयानन्दी हमें गुमराह करते हैं। सन्मार्ग (२७-१२-६९)

सनातन धर्म के सिद्धांत अकाटय

'सनातन धर्मलोक' नामक ग्रन्थ के लेखक पं० दीनानाथ सारस्वत ने कहा कि आजकल स्वामी दयानन्द की विजय शताब्दी मनाने का आर्यसमाजी उपक्रम

मूर्तिपूजा व अवतारवाद का खण्डन करना है। उन्हें पहले वेद का ज्ञान होना चाहिए।

'सन्मार्ग' (२७-१२-६६)

धर्म का ज्ञान विज्ञान से नहीं वेद से

सनातन धर्मावलम्बियों के गुरु एवं रामराज्य परिषद् के संस्थापक स्वामी करपात्री जी ने कहा कि धर्म का ज्ञान विज्ञान से नहीं हो सकता। बल्कि उसके लिये पहिले से मान्य प्रमाण वेद से ही हो सकता है।

शास्त्रार्थ के लिये आर्यसमाजियों द्वारा भेजे गए संस्कृत पत्र का उल्लेख करते हुये आपने कहा कि उस ६ या ७ पन्ने के पत्र में हर पन्ने पर १०-१० अशुद्धियाँ हैं। वाराणसी आने वाले आर्यसमाज के नेताओं को हरिश्चन्द्र कालेज के प्राँगण में पधार कर सनातनियों के साथ शास्त्रार्थ करने का आपने सुझाव दिया।

'भारत' इलाहाबाद—(२४-१२-६६)

कोई आर्यसमाजी नहीं आया

माधवाचार्य पुलिस थाने में भी शास्त्रार्थ को तैयार—

सनातन धर्म विजय महोत्सव शास्त्रार्थ समारोह में शास्त्रार्थ महारथी श्री माधवाचार्य ने कहा कि मैं पांच हजार के पुरस्कार की घोषणा कर चुका हूँ अभी तक कोई समाजी आया नहीं।

उन्होंने कहा कि आर्य समाजी ब्राह्मण ग्रन्थ को वेद नहीं मानते। अथर्व वेदोक्त पुराण शब्द का अर्थ यदि ब्राह्मण ग्रन्थ आर्य समाज माने तो उसकी मौत है और यदि भागवतादि पुराण अर्थ माने तो पुराणों की भी वैदिकता सिद्ध हो जाने से उसकी दोहरी मौत हो जायगी। मन्त्र से पहिले हमारे यहां विनियोग है। जिनमें देवता और ऋषि का नाम होता है। यह सविता, मित्र, सूर्य नाम ईश्वर का क्यों पड़ा ? इनमें कोई भिन्नता होगी। मन्त्र पाठ से पूर्व पढ़े जाने वाले विनियोग की ऋषि देवतात्मक व्याख्या पुराणों से ही सम्भव है। अतः आचार्यों के मत से पुराणों की सत्ता वेदों से भी पूर्व स्वीकार की गई है।

आर्य समाज के विश्वश्रवा ने झूठ बोलने का ठेका ले रखा है। अजमेर की सभा में जहां पुरी के शंकराचार्य और करपात्री जी . महाराज गये ही नहीं, वहाँ की सभा में वह उन्हें हराने की अफवाह प्रचारित करता है।

हम आर्यसमाज की सभाओं में जाकर शास्त्रार्थ करने को तैयार हैं किन्तु कठिनाई यह है कि उनके यहाँ हमारे आचार्यों के बैठने को उचित स्थान ही नहीं है। मैं उनसे शास्त्रार्थ करने के लिए पुलिस थाने में भी चलने को तैयार हूं।

—:०:— 'सन्मार्ग' (२७-१२-६६)

[पृष्ठ ६३ का शेष]

स्वा० दयानन्द जी ने बलि वैश्वदेव में ऊखल में ग्रास रखवा कर 'वनस्पतिभ्योनमः' मन्त्र पढ़वाया । अपनी पञ्च महायज्ञ विधि में स्वामीजी ने यहाँ 'वनस्पति' का 'परमात्मा अर्थ' किया और बहु वचन यहां आदरार्थ माना। इसका तात्पर्य यह हुआ कि वे ऊखल मूर्ति के द्वारा परमात्मा को भोग लगाते हैं, जिस प्रकार स्वामी आर्याभिविनय के द्वारा भगवान् को गिलोय के रस का भोग लगाते हैं। सो यह मूर्तिपूजा ही हुई ।

इस पर प्रतिपक्षी कुछ न कह सका । केवल इतना कहा कि कीड़ों चींटों को यह अन्न पृथ्वी पर दिया जाता है। जैसा कि मनु ने भी लिखा है—

इस पर हमने कहा कि वहां तो कुत्तों कौए आदि को पृथ्वी पर अन्न देने का विधान है इसमें ऊखल में ग्रास डालने का कोई प्रसंग नहीं । यह तो स्पष्ट मूर्तिपूजा है। अन्त तक भी प्रतिपक्षी इसका प्रत्युत्तर नहीं दे सका ।

चूड़ाकरण में 'विष्णोर्दं ष्ट्रोसि शिवो नामासि स्वधितिस्ते पिता नमस्तेऽस्तु मा मा हिंसीः' यह मन्त्र छुरे की ओर देखकर स्वा० दयानन्द जी ने पढ़वाये हैं। इसका अर्थ यह हुआ कि हे छुरे, तू विष्णु की दाढ़ है। छुरा विष्णु की दाढ़ बन गया। फिर अगले मन्त्र में छुरे को कहा गया—तेरा नाम शिव है, तेरा पिता स्वधिति वज्र है, तुझे नमस्कार हो। मेरी अर्थात् मेरे इस बच्चे की ऐ छुरे ! हिंसा न करना। यह स्वा० दयानन्द जी की कितनी डबल मूर्तिपूजा है। यहाँ वेद ने छुरे को भी नमस्कार कराई है। तभी तो स्वामी जी ने छुरे की ओर देखकर उसे दाहिने हाथ से उठाकर मन्त्र पढ़वाया है। तभी तो यह किसी कवि कहा है—

'देव मूर्ति कभी न पूजें, पूजें छुरा जो नाइयों का।

अजब हाल संस्कार विधि में आर्यसमाजी भाइयों का।'

(इस पर प्रतिपक्षी ने कहा कि यह छुरे को नहीं कहा गया है, किन्तु विष्णु को कहा गया है। विष्णु यज्ञ का नाम है। सो यह छुरा यज्ञ का साधन है।') तब हम ने प्रत्युत्तर दिया कि—यह छुरे की ओर देख कर वा छुरे को दाहिने हाथ में उठा कर यह मन्त्र पढ़ा गया है। यहाँ कोई परमात्मा को वा यज्ञ को हाथ में पकड़ कर यह मन्त्र नही पढ़ा गया। मध्यम पुरुष होने से भी यह छुरे को ही नमस्कार

सिद्ध हुई। 'नमः' का अर्थ 'मान करना स्वामी भी मान गये हैं। सो यह स्पष्ट मूर्तिपूजा सिद्ध हुई। इस पर प्रतिपक्षी ने मौन धारण कर लिया।

हलके फाले—जिसे वेद में सीता कहा गया है—स्वा० द०जी शहद, घी आदि चढ़वाते हैं, और प्रार्थना करते हैं। यह हमें अन्न देगा। यह भी मूर्तिपूजा ही है। उसी पटेले को नमस्कार भी कही गई। 'अर्वाची भव सुभगे ! सीते ! वन्दा महे त्वा।' इससे अन्य मूर्तिपूजा क्या होगी। इस पर प्रतिपक्षी ने कहा कि—ऐसे वचन अन्योक्ति हुआ करते हैं। वेद का अचेतन को सम्बोधन करना यह शैली हुआ करती है।' इस पर हमने कहा कि यदि ऐसा है, तो वेद मूर्तिपूजक सिद्ध हुए। इसमें अन्योक्ति क्या है, यह तो आपने बताया नहीं। मूर्ति को सम्बोधन करना वा उसे नमस्कार करना—यह शैली मूर्तिपूजा को वैदिक बताती है। तब सनातन-धर्मियों पर आक्षेप क्यों किया जाता है कि—अचेतन मूर्ति के आगे प्रार्थना वा उसकी पूजा करते है। महाशय ! स० ध० के अनुसार यह उस मूर्ति के माध्यम से परमात्मा की ही प्रार्थना तथा उसीकी पूजा है। स्वा० द० जी ने भी लिखा है—'किसी जड़ पदार्थ के सामने सिर झुकाना वा उसकी पूजा करनी सब मूर्तिपूजा है।' प्रार्थना भी पूजा का ही अङ्ग होता है। पूजा का अर्थ सम्मान होता है।

जब शास्त्रार्थ समाप्त हो गया तो आर्यसमाज के प्रधान आचार्य विश्वश्रवा, व्यास जी ने कहा कि—हमने सारे भारत में शास्त्रार्थ के अश्वमेध का घोड़ा छोड़ रखा है, अब वह काशी में पहुंचेगा। इस पर हमारे प्रधान श्री बालकृष्ण जी धर्मालङ्कार ने कहा कि—वह आपका घोड़ा दिल्ली में ही पकड़ लिया है, वह काशी में क्या पहुँचेगा। शुभम्

—०—

अद्भुत संयोग की बात

—स्वामी श्री संकर्षणाचार्य शास्त्री

सनातनधर्म-विजय के उपलक्ष्य में काशी में जब ऐतिहासिक शोभा-यात्रा निकली तो मार्ग में आस्तिक नास्तिक नागरिकों ने जहां अनेकों स्थानों पर धर्माचार्यों की आरतियें उतारी और एला लवंग पान मिश्री, इत्र और ताम्बूल तथा पुष्पमालाएं अर्पित की, वहां स्वागतार्थ अनेक नामों से कई भव्य द्वार भी बनाए थे, उनमें एक द्वार वैकुण्ठवासी श्री माधवाचार्य के नाम से बना भी देखा गया, मुझे जिज्ञासा हुई कि ये कौन महानु-

भाव थे, जिनके नाम से यह द्वार बना है। तब मुझे एक वृद्ध महात्मा ने बताया कि सौ वर्ष पूर्व स्वामी दयानन्द का जो यहां शास्त्रार्थ हुआ था उस में सनातनधर्म की ओर से मुख्य वक्ता तो श्री पं० ताराचरण तर्क-रत्न थे, परन्तु दयानन्द जी जब उनसे मूक हो गये तो फिर वे एक-एक करके स्वामी विशुद्धानन्द जी महाराज, श्री बाल शास्त्री जी महाराज आदि विद्वानों से अमुक २ प्रश्न करते रहे और उत्तर पाते रहे। इस प्रकार प्रश्नोत्तर का क्रम अन्यून चार पांच घण्टे चलता रहा, आगे भी न जाने कितने समय तक और भी चलता, क्योंकि शास्त्रार्थ का कोई निर्णायक मध्यस्थ न होने के कारण आखीर इस को कहां समाप्ति हो यह कुछ निश्चित नहीं था, परन्तु यह द्वार जिसके नाम से बना है वे श्री वैष्णव विद्वान् श्री माधवाचार्य जी महाराज 'शतपथ ब्राह्मण' लेकर सभा में उपस्थित हुये, उसमें से '*दशमेऽहनि किञ्चित् पुराणमाचक्षीत*' इत्यादि पाठ के पृष्ठ दयानन्द जी के हाथ में देकर कहा कि देखो—यज्ञ में दशवें दिन पुराण पारायण की वेदाज्ञा है, दयानन्द जी उन पत्रों को बहुत देर तक उलट-पुलट कर देखते ही रह गये, इस अनभ्र वज्रपात से वे ऐसे चकित हुए कि कुछ कहते सुनते नहीं बना, सन्न रह गये। अभी तक वे अपनी वावदूकता के कारण धृष्टता पूर्वक कुछ न कुछ उलटा-सीधा कहते ही रहे थे परन्तु इस बार कुछ भी कहते नहीं बना क्योंकि स्वामी जी के मान्य इक्कीस ग्रन्थों में से यह ग्रन्थ भी अन्यतम था, बस जब बहुत देर तक मूक रहे, खड़े हो गये और छटपटाने लगे तब श्रीस्वामी विशुद्धानन्द जी महाराज ने दया पूर्वक उनको सान्त्वना देते हुये कहा 'जो होना था सो हो गया अब शान्त होकर बैठ जाइये।' इस तरह उस शास्त्रार्थ में अन्तिम मूकता प्रदान करने का श्रेय श्री माधवाचार्यजी को प्राप्त हुआ था, सौ वर्ष के बाद अब भी काशी के अनेक चूडान्त विद्वानों की विद्यमानता में दयानन्दियों को पराजित करने का मुख्य श्रेयः शास्त्रार्थ महारथी श्री माधवाचार्य दिल्ली वालों को ही मिला है यह नाम साम्य का योगायोग अद्भुत संयोग की बात ही कही जा सकती है कि तब भी माधवाचार्य और अब भी माधवाचार्य।

[श्री स्वामी जी की उपर्युक्त कल्पना है तो दिलचस्प परन्तु 'उस' और 'इस' विजय का श्रेय किसी भी एक व्यक्ति को नहीं दिया जा सकता, प्रथम तो इस का वास्तविक श्रेय एकमात्र श्रीमन्नारायण भगवान् को ही हो सकता है. फिर यदि हो सकता है तो उस समय काशी नरेश और इस समय पूज्य स्वामी करपात्री जी महाराज ही श्रेयः पात्र हैं जो कि इन आयोजनों के सूत्रधार बने। —सम्पादक]

श्री सिद्धपीठ हथियाराम मठ

श्री हथियारामठ सिद्धों का स्थान है। इस मठ को स्थापित हुए करीब पांच सो वर्ष हो गए। इसके संस्थापक सिद्धयोगी श्री बाबा मुरारनाथ यति जी महाराज थे। इनके पास विशेष करके यौगिक सिद्धियां थी, वितस्ता नदी के तट पर वे कभी कभी हाथी का भी रूप धारण कर लेते थे, इसलिये स्थान का नाम भी हथियाराम पड़ गया है।

तपोनिष्ठ श्री १०८ श्री स्वामी विश्वनाथ यति जी ने गुरुकुल की स्थापना की। इस पीठ पर आसीन होने पर बारह वर्ष तक फलाहार का नियम है। महाराज के तत्त्वाधान में वैदिक मन्त्रों द्वारा शिवाराधन एवं श्री लक्ष्मीनारायण का पूजन करते हैं। सन्त, गो, ब्राह्मण, अतिथियों की सेवा सत्कार दातव्य औषधालय गोशाला, धार्मिक उपदेश, श्री विश्वनाथ गुरुकुल संस्कृत महाविद्यालय आदि स्थान चलते हैं। भोजन अथवा छात्रवृत्ति का प्रबन्ध है। अन्नक्षेत्र, पुस्तकालय एवं वाचनालय, देवालय हैं। तपोनिष्ठ श्री १०८ श्री स्वामी विश्वनाथ यतिजी महाराज आप शान्त, गम्भीर, तेजोमय, आर्षपद्धति के परमानुरागी हैं भोग से घृणा, योग से प्रेम है, आप पूर्व जन्म के संस्कारी हैं। सत्तर वर्ष की अवस्था में भी आज निरुद्यम नहीं रहते हैं। अभी गोहत्या निरोध आन्दोलन में पचास व्यक्तियों का एक जत्था लेकर देहली गये, वहां आपको कुछ चोट आई परन्तु उसकी आपने कोई परवाह नहीं की। आप वज्रदेह हैं—पर हृदय कोमल। भगवद् विभूति हैं।

श्री १०८ स्वामी फलाहारी बालकृष्ण यतिजी महाराज महामण्डलेश्वर महाशक्ति के अधिष्ठान हैं। पूर्ण ईश्वर विश्वासी, स्वाभाविक योगी, संयमी, प्रतिभावान् हैं। आपको श्री महाराज ने अपना उत्तराधिकारी, निर्वाचित किया है। साधु समाज ने मण्डलेश्वर उपाधि देकर आपका सम्मान किया है। आप बड़े उदार महात्मा हैं। आपने ही विजयोपलक्ष्य में महारथी जी को सभा में पुरस्कृत किया था।

दरबार पिण्डोरी-धाम

जिला गुरदासपुर में पिण्डोरी एक ग्राम है जो आजकल पञ्जाब का एक विशिष्ट तीर्थ माना जाता है। यह स्थान मुगल-सम्राट् जहांगीर

के काल से महात्माओं की लीला-भूमि रहा है। स्वयं सम्राट् जहांगीर ने यहाँ के सन्तों से प्रभावित होकर अपनी इच्छा से पिण्डोरी दरबार के नाम अनेक गांव लगा दिये थे जो आजकल दरबार के साथ सबद्ध हैं। आदि आचार्य श्री भगवान् जी भगवदवतार ही माने जाते हैं और उनके दो शिष्य श्री महेशदास जी और श्री नारायण जी भी सबके परम श्रद्धेय हैं। धर्म प्रचार में आप सदैव औदार्य रखते है।

योगिराज श्री भगवान्नारायण जी महाराज—जो उग्रविष के सात प्याले पीकर भी स्वस्थ रहे। तथा सद्गुरु श्री बाबा महेशदास जी महाराज जिनकी कुतिया जहांगीर के हाथ से प्रदत्त सवामण अफीम खागई थी। आत्मबल के आगे नतमस्तक हो जहांगीर विष-पान कराने के अपराध के प्रायश्चित के रूप में पिण्डोरी पीठ के आदिम मन्दिर का तथा योगगुफा का निर्माण कराया था।

वर्तमान श्री आचार्य पूज्यपाद श्री स्वामी गुरुदेव श्री रामदास जी महाराज तो साक्षाद् भगवद्रूप तपः पूत एवं भक्ति की साकार प्रतिमा हैं। पूज्यपाद श्री महाराज जो के परम शिष्य श्री जयरघुनन्दन दास शास्त्री जो भी अपनी गुरुपरम्परा की निष्ठाका तत्परतासे पालन करने वाले महात्मा हैं।

—०—

जूता काण्ड की विजय स्थली

श्री सनातन धर्म सभा हैदराबाद

जिसकी स्थापना शास्त्रार्थमहारथी पं० माधवाचार्य जी शास्त्री की प्रेरणा से ज्येष्ठ शु. सं० १९२८ (१९८० ई.) को हुई। जिसके संस्थापक श्री पं० लक्ष्मीनारायण शर्मा ने अपना समस्त जीवन ही धर्म प्रचार के लिये अर्पण किया हुआ है।

सभा का कार्य क्षेत्र हैदराबाद तेलगांना, महाराष्ट्र एवं करनाटक के कुछ भागों तक विस्तृत है। धर्म प्रचार के लिये उपदेशकों की नियुक्ति आचार्य संत महात्माओं के प्रवचनों का प्रबन्ध अनेक विध यज्ञ, रामायण-नवाह पारायण, भागवत सप्ताह पारायण, अखण्ड हरिनाम संकीर्तन आदि बृहत् आयोजन रखे जाते हैं।

सभा के आधीन रात्रि संस्कृत पाठशाला, पुस्तकालय, व्यायाम शाला और यज्ञशाला संचालित है। सभा भवन के प्रांगण में एक विशाल सभा

मंच का निर्माण किया गया है, तेलंगाना महाराष्ट्र एवं करनाटक के कई भागों में सभा की शाखायें हैं, जहां सभा की ओर से प्रचारक भेजे जाते हैं। गोरक्षा आन्दोलन सं. २०२१ में गोसूक्त महायाग किया। सं. २०१३ के सत्याग्रह में बम्बई जत्थे भेजे गए। सं. २०१५ श्रीस्वामी रामचन्द्र वीर का ४१ दिन तक अनशन हुआ। सं. २०२३ सर्वदलीय गोरक्षा महाभियान समिति की आन्ध्र प्रदेश शाखा की स्थापना की गई। सत्याग्रह के लिए दिल्ली जत्थे भेजे गए। सभा की ओर से समय २ पर छोटे बड़े कई पुस्तक प्रकाशित हुवे हैं। सं. १९२७ में मोहम्मद सिद्दीक दीनदार की सरवरे आलम पुस्तक में किये गये आक्षेपों का स्वर्गीय श्री पं. कालूराम शास्त्री द्वारा 'सरवरे आलम का मुंह तोड़ जबाब' नामक पुस्तक लिखवाकर जनता में प्रकट किया।

२५-२६ दिसम्बर सं. १९३० को विधवा विवाह पर श्री पं० माधवाचार्य जी शास्त्री ने हैदराबाद में आर्यसमाजी पं. श्री पं. चन्द्रभानुजी से शास्त्रार्थ किया और विजय प्राप्त की आर्यसमाज की ओर से नियत किये हुये शास्त्रार्थ के अध्यक्ष श्री पं. कल्याण राम ऐयर हाई कोर्ट वकील ने निम्नलिखित विजय पत्र अंग्रेजी भाषा में प्रदान किया।

Pandit Madhavchary Shastri Sahitymartand and Hindi prabhaker of Punjab was here in connection with his lecturing tour in support of the Sanatan Hindu Dharma

There has been some severe conflict here between the sanatanitsts and AryaSamajists over the question of Hindu widow Remarriage in connection with a bill regarding the same in the local Legislative Councll, I had the honour of presiding at two meetings between these two parties, The said Shastriji was the chief exponet of the Sanatanic Vedic Dharma on both occasions and so far as I was able to judge of the Arya Samajist pandit, he was not able to meet the Shastriji onaay of the points expounded by him. I therefore express my deep of appreciation of Shastriji's talents and work.

I only wish that some more of his caliber would be found to carry on similar work throughut the whole of India in these unfortunate degenerate days.

Sd/S. kalyanram.

काशी शास्त्रार्थविजयोपलब्ध्ये

प्रस्तोता – श्री सूर्यप्रकाश शर्मा, वेदशास्त्री

मा धाव मा धाव सुडिण्डिमं ते
श्रुत्वा समे सत्यसनातनीयाः ।
वादं विधातुं समुपागता द्राक्
हे हे दयानन्द-समाज-वृन्द ! ॥१॥

इत्थं यदा माधवशास्त्रिवर्यो,
मञ्चे दयानन्दसमाजक्लृप्ते ।
स्थित्वा पुरस्तादपि कापडेयान्,
उच्चैः समाहूय भृशं ह्यवोचत् ॥२॥

कापट्यपूर्णाः खलु तावदार्याः,
भीताः मृगेन्द्रात्तु यथा करीन्द्राः ।
प्रोत्तण्डवादं च विधाय तूर्णम्,
आरक्षकागार-गुहां प्रविष्टाः ॥३॥

वादाहवे विश्रुतकैतवाः ये,
दृष्टं श्रुतं यैर्न कदापि शास्त्रम् ।
गोमायुरावे सततं प्रवीणाः,
ते वै समर्था नहि शास्त्र-वादे ॥४॥

रसाक्षि खाक्षि शरदि, पौषे शुक्लेऽष्टमीतिथौ ।
लिखिता सूर्य्यकविना काशीवाद-प्रशस्तिका ॥५॥



नमाजी और समाजी

—श्री व्याकुल जी महाराज सितारे हिन्द

एक-एक अक्षर कुरान का वो मानें पै,
वेद-मन्त्र मानिबे में ये तो कहें चुन चुन ।
पाक गाह मसजिद हिफाजत में वो तो लगे,
मन्दिर गिराय ये पाखाने करें बुन-बुन ।।
वो तो चुराय पर नारी निज नारी करें,
ये तो परनारी बेच द्रव्य धरे गुन गुन ।
वो तो बनें हाजी काजी ये तो बनें पूरे पाजी,
आरियासमाजी से नमाजी अच्छे लाख गुन ।।



नया मजहब समाजी चन्द दिन से खोल बैठे हैं ।
मिला करके ये मूर्खों को बना निज गोल बैठे हैं ।
कहीं गदहे भी धोने से गऊ के पुत्र होते हैं ।
मसल है बानी कोयल की ये कौवे बोल बैठे हैं ।।
यहाँ ऋषियों की थी भूमी, प्राण देती थीं पति के संग ।
उन्हीं विधवाओं की अस्मत समाजी रोल बैठे हैं ।
रचा एक ग्रंथ स्वामी ने उसी को वेद मत माना ।
बहुत से मन्त्र के अर्थों को ये कर गोल बैठे हैं ।।
नमाजी हज्जरोजा संगे असवद को मनाते हैं ।
समाजी शुभ कर्म अमृत में भी विष घोल बैठे हैं ।।
बजाते हैं बड़े जोरों से झूठा ढोल वेदों का ।
जो ढूंढा सत्य अन्दर घुस छुपाए पोल बैठे हैं ।।
नहीं 'व्याकुल' दिखा दें हम लिखा जो कुछ दयानन्द ने ।
सनातन धर्म वाले सब इसे टकटोल बैठे हैं ।।

❋ स्वर्गीय प्रमुख विद्वान् नेता ❋

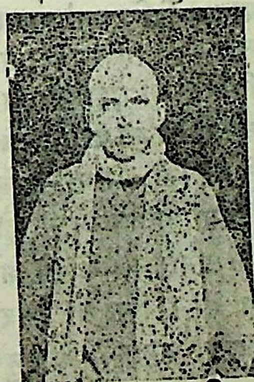


श्री रामानुज भगवत्पादीय—

जगद्गुरु स्वा० देवनायकाचार्य महाराज

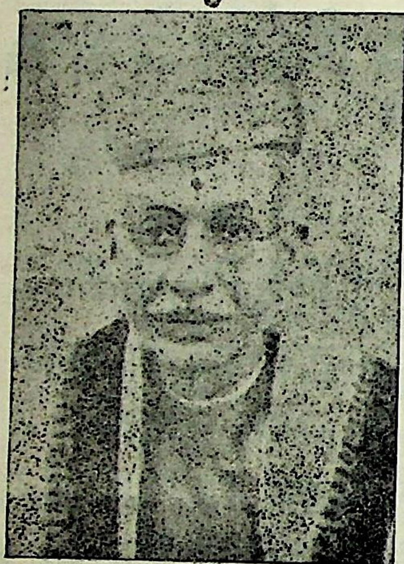
बड़गादो बम्बई—अपने समय के धर्म के जागरूक प्रहरी और श्री वैष्णवाचार्यों में प्रमुख पर्य्यटन शील।

स्व० श्री स्वामी लालनाथ जी



अनेक शास्त्रार्थों में नास्तिकों की बोलती बन्द करने वाले अडिग योद्धा—

गोस्वामी यदुकुल भूषण, श्री राजनारायण अर्मान षट् शास्त्री, पं० श्रीकृष्ण शास्त्री 'अग्निमीड़े' स्वामी आलाराम सागर सन्यासी, श्री स्वामी बालराम उदासीन, श्री पं० ज्वाला प्रसाद मिश्र, श्री पं० श्रीकृष्ण शास्त्री राजपण्डित पटियाला श्री पं० लक्ष्मीचन्द जी कौल, श्री पण्डित रामशरण दास जी प्रताप गढ़ श्री पं० जगत्प्रसाद शास्त्री इत्तखाबेहिन्द।



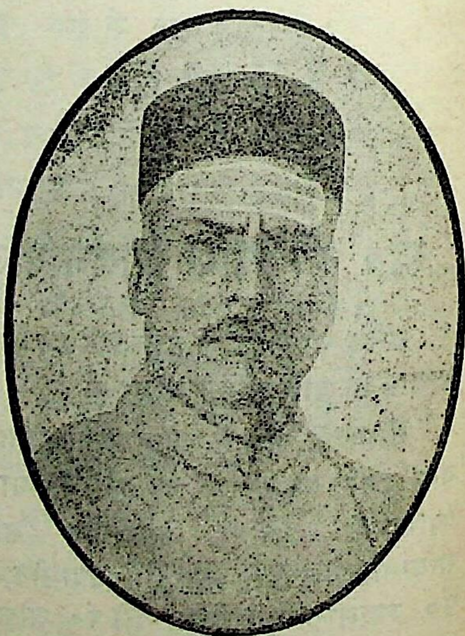
स्व० श्री पं० म० म०

गिरिधर शर्मा चतुर्वेदी

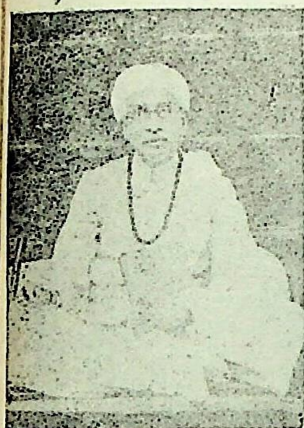
आपने अनेकों शास्त्रार्थों में आर्यसमाजियों को परास्त किया, गुरुकुल काँगड़ी के मंच पर स्वा० श्रद्धानन्द के तत्वावधान में हुवा आपका वर्ण-व्यवस्था का शास्त्रार्थ ऐतिहासिक स्तर का सिद्ध हुआ, जिसमें स्वर्गीय महात्मा गांधीजी भी उपस्थित थे। इस शास्त्रार्थ से प्रभावित हुये श्री गांधी जी अन्त तक जन्मजात-वर्णव्यवस्था के प्रबल समर्थक रहे।

स्व० कविरत्न

पं० अखिलानन्द जी



अन्यून बीस वर्ष तक कट्टर आर्यसमाजी शास्त्रार्थी रहे। 'दयानन्द-दिग्विजय' महाकाव्य लिखकर आर्यसमाज से ही 'कविरत्न' की उपाधि प्राप्त की, परन्तु असत्य की वकालत करते-करते आपकी आत्मा नें विद्रोह कर दिया, अतीव ग्लान्त होकर उन्होंने सनातन-धर्म की शरण ग्रहण की। फिर तो 'घर का भेदी लंका ढहावे' के अनुसार शास्त्रार्थों में आर्यसमाज की वह मट्टी पलीत की कि महाशयों से तोबा करवा दो।



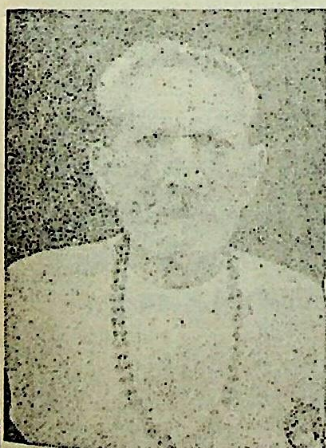
स्व० श्री पं० कालूराम शास्त्री

कालूराम जी यथार्थ में–मानो आर्यसमाज के लिये साक्षात् काल ही थे। आपने अपने जीवन में अगणित बार दयानन्दियों को शास्त्रार्थ में पछाड़ा, आपके दो दर्जन ग्रन्थ और 'हिन्दू' पत्र आर्यसमाजियों के लिए मानो मृत्यु के वारन्ट ही थे।

स्व० स्वामी दयानन्द जी



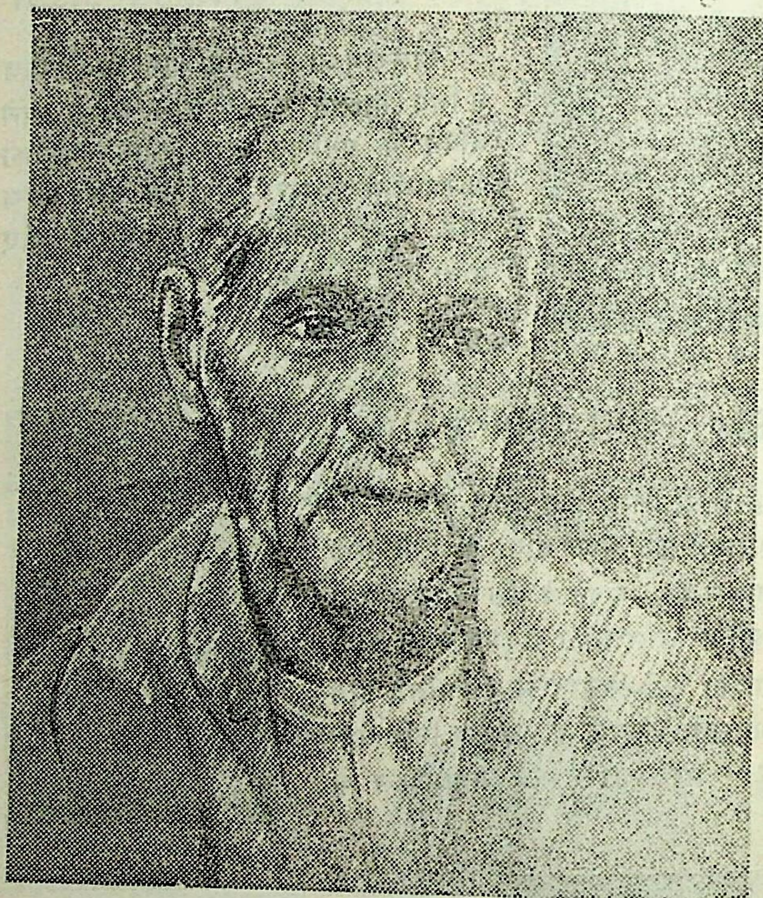
मितभाषी किन्तु प्रौढ़ वक्ता, आर्य समाज के सिद्धान्तों की सभ्य भाषा में ऐसी युक्ति युक्त आलोचना करते थे कि आर्य समाजी स्वयं अपना खोखलापन अनुभव करने लगते थे। आपका 'धर्म-विज्ञान' नामक प्रसिद्ध ग्रन्थ आज भी सनातन धर्म की अमूल्य निधि बना हुआ है। आप भारत-धर्म महामण्डल के सर्वस्व थे।



स्व० श्री पं० मुकुन्दराम शास्त्री

आप दिग्गज शास्त्रार्थियों में अन्यतम थे शास्त्रार्थों में आपने अनेकबार आर्यसमाजियों के छक्के छुड़ाये।

महामना पं० मदनमोहन जी मालवीय



सनातनधर्म प्रतिनिधि सभा पंजाब के संस्थापक, शीर्षस्थ राष्ट्र नेता, स्वतन्त्रता संग्राम के अथक अग्रणी। जिनकी अक्षय कीर्ति का ज्वलन्त प्रमाण है काशी हिन्दू विश्वविद्यालय। आप सन्त परम्परा के तुलसी और राजनीति-परम्परा के चाणक्य कहे जा सकते हैं। आपके संकल्प से निर्मित हिन्दु विश्वविद्यालय का प्राणभूत विश्वनाथ मन्दिर काशी का गौरव है।



लोकमान्य—

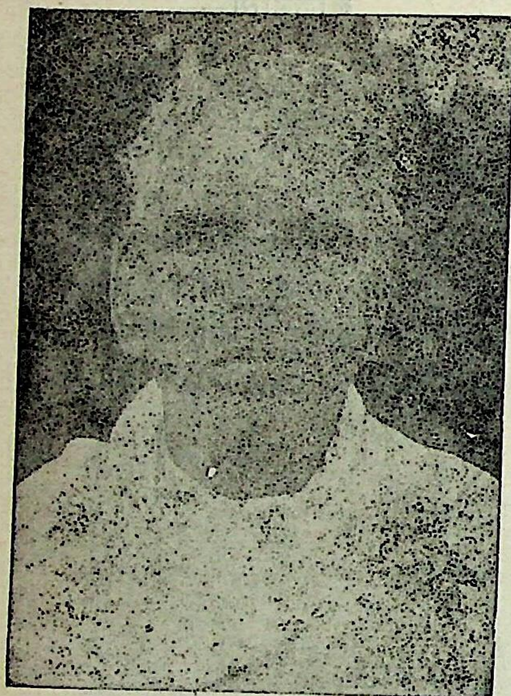
श्री बाल गंगाधर तिलक

'स्वराज्य मेरा जन्म सिद्ध अधिकार है' इस स्वातन्त्र्य मन्त्र के प्रथम उद्घोषक, श्रीमद्भगवद् गीता के गम्भीर विचारक और ब्रिटिश शासन की जेलों के अन्यतम अतिथि सनातनधर्म के क्रियाशील नेता।



स्वातन्त्र्यवीर सावकर

हिन्दुत्व की साक्षात् प्रतिमा, अंडमान के जीवित शहीद। जिन्होंनें क्रान्तिकारियों की उज्ज्वल परम्परा का सूत्रपात किया। आप गणपति एवं महाराष्ट्रियों की कुल-देवी तुलजा भवानी के परम भक्त थे।



स्वर्गीय गोस्वामी

गणेशदत्त जी महाराज

प्रधानमन्त्री श्री स०ध० प्रतिनिधि सभा पंजाब आपके मन्त्रित्व काल में अकेले पंजाब प्रान्त में शताधिक नये २ मन्दिरों का निर्माण हुआ, नई दिल्ली का लक्ष्मी नारायण मन्दिर और सप्त स्रोत (हरिद्वार) के सप्तर्षि मंदिर अखिल भारतीय स्तर के दर्शनीय देवस्थान हैं। जिन के दर्शनार्थ भारत तथा विदेश के लाखों व्यक्ति प्रतिवर्ष पहुंचते हैं।



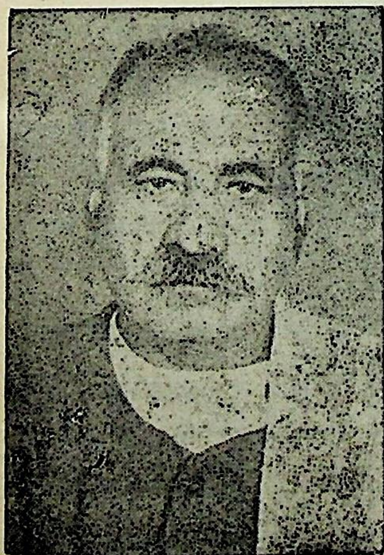
डा० श्यामा प्रसाद मुखर्जी

भारतीय संस्कृति और सभ्यता के प्रबल पोषक, मां काली के उपासक, काश्मीर की स्वतन्त्रता के लिये आहुति देने वाले अमर शहीद।



स्व० श्री स्वामी प्रकाशानन्द सरस्वती

सनातन धर्म के प्रसिद्ध वक्ता शास्त्रार्थी और धुरन्धर लेखक थे। आपके सम्पादन में 'दैनिक भीष्म' (लाहौर) खूब चमका प्रताप 'मिलाप' आदि पत्र नगण्य हो गए।



स्व० श्री शिवराम सेवक

आप कई वर्ष तक स० ध० महावीर दल पंजाब के दलपति रहे। कुम्भ आदि पर्वों के समय तीर्थों पर यात्रियों को सर्वविध सेवा करते रहे, आप जहां एक सुयोग्य प्रबन्धक थे वहां सुवक्ता भी थे, जनता आपके भाषणों से बहुत प्रभावित होती थी। गो० गणेश दत्त जी के तो आप दक्षिण हस्त ही थे।

विश्वविश्रुत स्वामी विवेकानन्द जी



आपने मूर्तिपूजा, मृतश्राद्ध आदि सभी सनातनधर्मी सिद्धान्तों का वैज्ञानिक रीति से निरूपण करके संसार को चकित कर डाला। आज भी उनके मुद्रित व्याख्यान हिन्दु संस्कृति की अमूल्य धरोहर हैं।

स्वामी दयानन्द और काशी शास्त्रार्थ पर लोकमत

एक शताब्दी पूर्व स्वामी दयानन्द और उसके काशी शास्त्रार्थ के सम्बन्ध में तत्कालीन समाचार पत्रों और प्रत्यदर्शी व्यक्तियों की प्रतिक्रिया।

'मित्र विलास' (१५-१०-१८७७)

'स्वामी दयानन्द जब यहाँ आया था तब मैंने भी उनसे आलाप किया था। यह किसी पक्ष पर आरूढ़ नहीं रहता, जब उससे कुछ उत्तर नहीं बनता तब वह होहो कर हंसता है। छबीलेलाल गोस्वामी वृन्दावन

मित्र विलास (५-११-१८७७)

'दयानन्द से शास्त्रार्थ करके इसको सत्पथ पर लाने के हेतु लाहोर तथा अमृतसर में पण्डित लोगों ने सभाएं कीं और नोटिस भी बांटे वह उन में एक सभा में भी न आया'। पं० नत्थूराम लवपुर

डाक्टर मोक्षमूलर आक्सफोर्ड (२-२-१८८२)

'धर्म ग्रन्थों का अर्थ बदल कर ऐसा अर्थ सिद्ध करना जिसका उनके कर्ता को स्वप्न में भी ज्ञान न मा और जिसका उदाहरण अत्यन्त हानिकारक दयानन्द सरस्वती का लिया हुआ वेद भाष्य विद्यामान है, यदि इसमें से धुर्वां के अंजन, तार तोप बन्दूक आदि अंग्रेजी शिल्प का भावार्थ लोगू तो उनकी विख्यातता और सत्यता का नाश करोगे।

'पिशावर में रहने वाले मुरलीधर ने काशी नरेश की सभा में अस्सी संगम के ऊपर बनारस रामबाग में पौष के महीने में सं० १९२६ में दयानन्द को परास्त किया था और रात्री के नौ बजे महादुर्दशा की थी।'

(मित्रविलास पत्र संख्या ७ खण्ड २ तारीख १२ नवम्बर सन् १८८८ ई० पृष्ट पंक्ति २०) (दयानन्द छल कपट दर्पण पृष्ट ३१)

काशी नरेश के यन्त्रालय में छपी—'दयानन्द पराभूति' और 'दुर्जन मतमर्दन' संस्कृत पुस्तकों में उक्त शास्त्रार्थ का पूरा विवरण छपा है जिसमें दयानन्द जी की सप्रमाण घोर पराजय अङ्कित है।

'प्रत्नक्रम नन्दिनी' (मासिक पत्रिका १८६९)

उक्त पत्रिका के सम्पादक प्रसिद्ध पं० सत्यव्रत सामश्रमी स्वयं शास्त्रार्थ में उपस्थित थे उन्होंने लिखा है कि—'दयानन्द एक साधु है, जिन्होंने सत्यधर्म प्रकाश

से असत्य को दूर करने का बीड़ा उठाया है। [illegible] दयानन्द का बल नष्ट कर देने पर भी और उसे हरा देने मात्र से विचार समाप्त नहीं हुआ।"

स्वामी दयानन्द काशी शास्त्रार्थ के समय ब्रह्मसमाज के सदस्य थे और अल्काट नामक अंग्रेज से अभावित थे अतः ईसाई पत्रों ने तथा ब्रह्मसमाजी पत्रों ने जानबूझ कर काशी शास्त्रार्थ का परिणाम विपरीत अङ्कित किया था वे पत्रथे—क्रिश्चियन इन्टेलिजेन्सर' हिन्दू पैट्रियर' आदि परन्तु निष्पक्ष पत्र 'पायोनियर' २० नवम्बर १८६९ ने लिखा था कि—

"विषय का नियम और क्रम बहुता से अन्तिम निर्णय करने के लिए दूसरी सभा होनी चाहिए। शास्त्रार्थ कुछ देर उत्तेजना के साथ चलता रहा उसमें यद्यपि किसी पक्ष को कोई सफलता नहीं हुई।"

जो लोग शास्त्रार्थ-विधान से परिचत नहीं हैं उनकी दृष्टि में वस्तुतः दोनों पक्षों में से किसी को भी सफलता नहीं मिली। उन्हें यही विदित हो सकता है, क्योंकि इस कथित शास्त्रार्थ में न कोई निर्णायक मध्यस्थ था और ना ही प्रामाण्या-प्रामाण्य का ही पूर्व निर्णय हुआ था, अतः शास्त्रार्थ का फल कौन घोषित करता। परन्तु जो वाद विधान-पद्धति से परिचत हैं उन्हें ही यह विदित हो सका कि श्री ताराचरण तर्क रत्न ने स्वामी दयानन्द के पक्ष की स्थापना ही नहीं होने दी अर्थात् पक्ष स्थापना हीन यह शास्त्रार्थ वाद न हो कर 'वितण्डा' कोटिमे प्रविष्ट हो गया था जो कि अति निम्नकोटि का वादानुवाद माना जाता है।

'मित्र विलास' (१-१०-१८८९)

'पाखण्ड-मार्ग में अग्रसर वेद-मार्ग का दूषक जो दयानन्द हुआ है उसके अनुयायियों की भ्रष्ट बुद्धि पर जो अच्छे विद्वान् सज्जन लोग हैं बड़ा उपहास करते हैं। दयानन्द को व्याकरण का ज्ञान कुछ नहीं और अल्पश्रुत केवल शब्द मात्र से कोई शास्त्र वेद को जान कर पण्डित मानी हो गया था। वेदार्थ की कुछ खबर नहीं थी। प्रमाण रहित उन्हें अर्थ कल्पना कर के अपने मन से लोगों के मन भ्रमाता था।

(आर्यतत्व प्रकाश पृष्ट ११)

'दयानन्द मत परीक्षा' पृष्ट ७

'स्वामी दयानन्द जी ने केवल लज्जा ही का त्याग नहीं किया है उनको अपने प्रयोजनानुकूल मिथ्या अर्थ बताते हुए भय और शंका भी तो नहीं होती कि विद्वज्ज मेरे पाण्डित्य पर हंसेंगे'।

टी० बिल्यन्स (रिवाड़ी ६ जून, १८८९)

'दयानन्द ने वेद का मिथ्या अनुवाद करके उस पर ऐसी अत्यन्त अनुचित शिक्षा का दोष लगाया है। दयानन्द अपने समय में वेद का सब से महाशत्रु ठहरता है।'

श्री राधाचरण गोस्वामी वृन्दावन 'भारतेन्दु' (मासिक पत्र आषाढ़ पौर्णिमा सं० १९४२) में लिखते हैं कि हिन्दुओं का धर्म ग्रन्थ वेद है, प्रथम इसके विनाशक स्वामी दयानन्द सरस्वती महाराज हैं, जो सनातन से सम्प्रदायानुसार एकार्थ वाच्य चला आता था आप ने वेद के अर्थ का कुछ भी भाव न समझ कर व्याकरण का खड्ग हाथ में ले वेद रूपी महानगर का कत्ल-आम कर दिया। रेल, तार, विमान बैलून जहाज कल आदि बिलायत का सारा कारखाना दिचारे भोले भाले परमेश्वर की वाणी में भर दिया।'

लिखित शास्त्रार्थ में दयानन्द पराजित

स्वामी दयानन्द ने अपने जीवन भर केवल एक ही लिखित शास्त्रार्थ किया वह भी किसी बड़े विद्वान् शास्त्रार्थी व्यक्ति से नहीं किन्तु काशी के एक प्रसिद्ध रईस श्री राजा शिवप्रसाद सितारे हिन्द से हुआ था। दोनों ओर से लेखबद्ध वादानुवाद चला, जिसे ग्रन्थ विस्तरभयात् हम यहाँ छापये में असमर्थ हैं। जिज्ञासु निर्दिष्ट पुस्तकों में पढ़ें। यहां हम केवल पराजित होकर 'शेषं कोपेन पूरयेत्' के अनुसार स्वामी जी ने जो प्रतिपक्षी को गालियें दीं, जिनको सुन कर भटियारिनें भी लजाती हैं ? उनको उद्धृत करके और मध्यस्थ एक विदेशी अंग्रेज का निर्णय मात्र छापते हैं।

गालियों की बौछार

स्वामी दयानन्द ने राजा साहिब के प्रश्नों का अन्तिम उत्तर 'भ्रमोच्छेदन' नाम से भेजा जो पश्चात् छपा भी इस बाइस पृष्ठ के ट्रैक्ट में ब्राह्मण-ग्रन्थों की अवैदिकता का एक भी प्रमाण न देकर केवल गालियों व्यौछार की। राजा जी के ही शब्दों में सुनिये जरा हृदय कड़ा करके—"एक पुस्तक 'भ्रमोच्छेदन' नाम मेरे निवेदन के उत्तर में' श्री मत्स्वामी दयानन्द सरस्वती का निर्माण किया हुआ आया समझा कि अब अवश्य स्वामी जी महाराज ने यथा नाम तथा गुण ; दया करके मेरे प्रश्नों का उत्तर भेजा होगा, बड़े उत्साह से खोल कर देखा तो—"शिव प्रसाद कम समझ आलसी, उसको संस्कृत विद्या में शब्दार्थ सम्बन्धों के समझने की समर्थ नहीं, वह अयोग्य, उसकी समझ, अल्प छोटी, वह अविद्वान् अधर्म-कर्म से युक्त अनधिकारी, उसके नेत्र फूट गये हैं, उसकी समझ, वह श्वान के समान, जैसी उसकी समझ वैसी किसी छोटे विद्यार्थी की भी नहीं, उसकी उल्टी समझ, वह प्रमत्त अर्थात् पागल, उसकी वाक्य का बोध नहीं, वह अन्धानाम मन्ये काणो राजा, तात्पर्थ-ज्ञान-शून्य, पक्ष-

पातान्धकार से विचार शून्य, अशास्त्रवित्, अव्युत्पन्न, व्यर्थ-वैतण्डिक, अन्धा उसको मिथ्या आडम्बर युक्त लड़कपन की बात, वह बाद के लक्षण युक्त नहीं, उसकी बुद्धि और आंखें अन्धकारावृत्त, वह सन्निपाती दह कोदो वेके पढ़ा, वह अविद्यायुक्त बालक, बधिर, विचारासंस्कृत विद्या पढ़ा ही नहीं—ऐसे वाक्यों के परिपूर्ण पाया।"

(द० छ० क० दर्पण पृष्ठ १५४)

दयानन्दियों की बड़ी हारें

यूं तो दयानन्द से लेकर आज के ऐये गैरे नत्थू खैरे समाजी उपदेशकों तक ने सनातन धर्मियों से जितने शास्त्रार्थ किये हैं उन सब में समाज की ही लज्जाजनक हार हुई है, तथापि वे जमीन में चौपट पड़े उस नक्कू की भांति पीठ झाड़ते हुये यह कह डाला करते हैं कि 'हम चारों खाने चित्त गिरे तो क्या हुआ, आखिर, नाक तो हमारी ही आसमान की तरफ ऊँची उठी थी।' परन्तु कई ऐसे भी अवसर आ चुके हैं जिन में कि उन चौपट पड़े महाशयों की छाती में गैर सनातनधर्मी विदेशियों ने तथा निष्पक्ष व्यक्तियों ने एक ऐसी निर्णायक कील कोठी है जोकि हृदय को वेधती हुई जमीन में जा घुसी, जिससे प्रलय पर्यन्त भी ये तीसमारखां न करवट बदल सकेंगे और न ऊँची नाक की निर्लज्जता पूर्ण दुहाई दे सकेंगे!

पहली हार

संवत् १९३६-३७ के मध्य में स्वामी दयानन्द और काशी के प्रसिद्ध रईस राजा शिवप्रसाद के मध्य ब्राह्मण ग्रन्थों के वेदत्व पर विचार हुआ। राजा साहब का पक्ष था कि मन्त्र और ब्राह्मण दोनों भागों की वेद संज्ञा है। स्वामी जी का पक्ष केवल मंत्र भाग को वेद सिद्ध करना था। जब वाचिक शास्त्रार्थ से स्वामी जी हार गए तथापि धृष्टता से अपने ही पक्ष का मिथ्या ढोल पीटते रहे तब तो दोनों ओर से लिखित वक्तव्य प्रकाशित किये गये, जो (१) निवेदन (२) भ्रमच्छेदन (३) अन्तिम निवेदन और (४) अनुभ्रमोच्छेदन नामक ट्रैक्टों के रूप में जनता में बांटे गए। जिन में पहिला और तीसरा राजा साहब की तरफ से तथा दूसरा और चौथा स्वामी जी की ओर से छपवाया गया था। अन्त में इस विवाद को शांत करने के लिए काशी राज स्थापित संस्कृत पाठशाला के अध्यक्ष प्रसिद्ध संस्कृतज्ञ डा० टीबो साहब नामक योरोपीय को तटस्थ व्यक्ति समझ कर निर्णायक निश्चित किया गया। उक्त अंग्रेज ने इस समस्त विवाद को साद्यन्त पढ़कर नीचे लिखा निर्णय दिया, और आश्चर्य पूर्वक कहा—'हम तो स्वामी जी को बड़ा पण्डित मानते थे परन्तु अब तो उनके मनुष्य होने में भी सन्देह होता है।'

टीबो साहिब का निर्णय

"राजा शिवप्रसाद और दयानन्द सरस्वती में जो विवाद उपस्थित है उस का निचोड़ यह है कि 'वेद' नाम से प्रसिद्ध ग्रन्थों के कौन भाग प्रमाण और कौन अप्रमाण हैं। दयानन्द सरस्वती सिवाय एक उपनिषद् के ब्राह्मण और सब उपनिषद् ग्रन्थों को छोड़ देते हैं और केवल संहिताओं को प्रमाण मानते हैं। यह रीति न आजकल के हिन्दुओं के मतानुसार है, न अतीत काल के आर्यों के मत से—जिन का लेख हम को मिलता है—अनुकूल है। इस कारण से दयानन्द सरस्वती को अवश्य उचित है कि बलवत् प्रमाण दें। जिससे उनके अभिमत की सिद्धि हो। वे कहते हैं कि संहिता 'ईश्वरोक्त' हैं, और ब्राह्मण तथा उपनिषद् 'जीवोक्त।

परन्तु इस बात का प्रमाण क्या देते हैं ? इस समय तक केवल कपोल कल्पना मात्र ही है। संहिता मात्र एक स्वतः प्रमाण होना और ब्राह्मण तथा उपनिषद् वाक्यों का निरा परतः प्रमाण होना तभी माना जा सकता है जबकि दयानन्द सरस्वती कोई दृढ़तर युक्ति दें। आज तक जो युक्तियाँ दी हैं उनसे कुछ भी सिद्ध नहीं होता। राजा शिवप्रसाद का यह पूछना न्याय्य है कि 'यदि एक स्वतः प्रमाण है तो दोनों क्यों न हों ? अथवा यदि एक परतः प्रमाण है तो दोनों क्यों न हों।'

और यह तो कभी युक्तियुक्त हो ही नहीं सकता कि वेद भिन्न पुस्तकों को भी कोई इसी रीति से कह दे कि वे भी वेद के समान हैं। क्योंकि केवल वेद (ब्राह्मण उपनिषद् सहित) ही को अनादि काल से Since Immemorial Times —अर्थात् इतने प्राचीन काल से कि जिसका ठिकाना कोई नहीं बता सकता—सब आर्य लोग अपने धर्म का मूल ग्रन्थ और परमेश्वर की वाणी मानते आए हैं। दयानन्द सरस्वती ने शतपथ ब्राह्मण (बृहदारण्यक उपनिषद्) से जो वचन उद्धृत किया है, उस पर राजा शिवप्रसाद की यह विप्रतिपत्ति कि 'इस वाक्य का एक भाग प्रमाण है तो दूसरा भी प्रमाण भूत होना चाहिए' युक्तियुक्त एवं अवश्य स्वीकार करने के योग्य है। यह एक वाक्य है अथवा वाक्य समूह है इस चर्चा का प्रकृत विषय से कुछ सम्बन्ध नहीं है।

निःसन्देह दयानन्द सरस्वती को अधिकार नहीं कि कात्यायन के उस वाक्य को प्रक्षिप्त बता दे जिससे कि मंत्र और ब्राह्मण दोनों भागों का "वेदत्व" सिद्ध होता है। इस तरह तो अपने कपोल कल्पित मत से विरुद्ध पड़ने वाले किसी भी वचन को मिथ्या कहा जा सकता है।

दयानन्द सरस्वती ब्राह्मण ग्रन्थों की प्रामाणिकता नहीं मानते तो तैत्तिरीय

संहिता के ब्राह्मण भागों को क्या कहेंगे ? इन ब्राह्मण भागों में और शतपथ पंचविंश आदि ब्राह्मणों में कुछ भी अन्तर नहीं है, तो क्या फिर तैत्तिरीय ब्राह्मण के सब मंत्रों को छोड़ देंगे ?

दूसरी हार

आज से चालीस वर्ष पूर्व पेशावर शहर की अदालत में समाजियों की तरफ से एक दावा दायर किया गया था। सनातनधर्मियों का पक्ष था कि 'दयानन्द कृत समस्त ग्रन्थ—एवं खासकर सत्यार्थ प्रकाश—व्याभिचार को उत्तेजना देने वाले और निहायत अश्लील हैं। समाजी इन्हें पवित्र सिद्ध करने के लिए प्राणपण की बाजी लगा रहे थे, इस प्रकार एक अर्से तक यह मुकद्दमा चलता रहा। अन्त में 'सत्य का बोलबाला, और झूठों का मुंह काला' हुआ। मजिस्ट्रेट ने नीचे लिखा फैसला दिया, जिस की नकल अक्षरश: यहाँ दी जाती है।

पेशावर अदालत का निर्णय

मुद्दई—मेहरचन्द मेम्बर आर्यसमाज पेशावर।

मुद्दाइला—गंगाप्रसाद सनातनधर्मी।

अदालत—मौलवी अंजाम अलीखाँ साहब मजिस्ट्रेट दर्जा अव्वल पेशावर।

जेर दफा ५०२ ता० ८ दिसम्बर सन् १८९१ ई०

'इस बात से इन्कार नहीं हो सकता कि दयानन्द की खास किताब (सत्यार्थ प्रकाश) में व्यभिचार की तालीम मौजूद है, मुद्दई खुद इस बात को मंजूर करता है कि वह उन नियमों पर—जिन में विवाहित स्त्री को अपने असली पति के जीते जी किसी अन्य विवाहित पुरुष के साथ भोग करने की आज्ञा है—विश्वास रखता है, यह रिवाज बेशुबह व्यभिचार है। इस वास्ते यह जिक्र करते हुये कि दयानन्द के शिष्य इन उपरोक्त नियमों पर विश्वास लाए हुये रस्म व्यभिचार का आरम्भ कर रहे हैं। और अगर इन नियमों पर इनका विश्वास इसी तरह तो ये इस जिनाहकारी को ज्यादा तरक्की देंगे। मुद्दाइले ने सचाई से एक प्रकट बात को प्रकाशित किया है।'

नोट—समाजियों ने इस फैसले की अपील की। जज साहिब बहादुर ने अपील को खारिज करते हुए नीचे लिखा रिमार्क दिया—

जज साहिब का रिमार्क

'दयानन्द के नियम ऐसे नियम हैं कि वे हिन्दूधर्म तथा दूसरे मजहबों की निन्दा करते हैं और इस किताब (सत्यार्थ प्रकाश) के चन्द हिस्से खुद भी निहायत फुहश हैं।'

भारत-हृदय-सम्राट् महात्मा गाँधी की सत्यवादिता आज जगत्प्रसिद्ध है। आपने अपनी 'आत्म-कथा' जो कि अमरिका के गुणग्राही लोगों ने लाखों रुपया दे कर खरीदी है—में वे वे बातें लिख डाली हैं कि जो सर्व साधारण को जीभ पर लाते हुये भी संकोच होता है। शायद यहाँ यह बताने की जरूरत नहीं कि महात्मा जी बहुत कुछ अनुभव करने के बाद ही किसी भी विषय में अपनी राय कायम किया करते हैं।

इस लिए जीवन भर में उन्हें अपनी राय को बदलने की आवश्यकता नहीं पड़तीं। आर्यसमाज और उसके संस्थापक तथा उसके धर्म-ग्रन्थों के सम्बन्ध में महात्मा जी ने जो सम्मति दी थी अढ़ाई लाख समाजी उसे पढ़ कर बौखला उठे थे, स्थान २ पर विरोध सभायें करके महात्मा जी को भर पेट कोसा था। तथापि गत कुम्भ के अवसर पर जब महात्मा जी को गुरुकुल कांगड़ी वाले आग्रह पूर्वक अपने जलसे में ले गये और कुछ बोलने को कहा तो गांधी जी ने अपनी उसी पुरानी राय को दोहराते हुये चन्द शब्द कहे। इससे यह बात सहज में ही समझी जा सकती है कि महात्मा जी जीवन पर्यन्त दयानन्दी समाज के सम्बन्ध में यही राय रखते रहे।

महात्मा गाँधी का निर्णय

'आर्यसमाज के बाइबिल सत्यार्थप्रकाश को मैंने दो बार पढ़ा, जब मैं यर्वदा जेल में आराम कर रहा था तब उसकी तीन प्रतियाँ कुछ मित्रों की तरफ से मुझे भेजी गई थीं, ऐसे महा सुधारक (दयानन्द) का लिखा हुआ इतना निराशजनक पुस्तक मैंने दूसरा नहीं पढ़ा।

उन्होंने सत्य की और नग्न सत्य की हिमायत करने का दावा किया है परन्तु ऐसा करते हुये उसने जानबूझ कर या बिना जाने जैन धर्म, इस्लाम, ईसाई मत और खुद हिन्दू धर्म के अर्थ का अनर्थ हो गया है। जिन को इन धर्मों का थोड़ा भी ज्ञान होगा वह स्वयं जान सकता है कि इस महा सुधारक से किस प्रकार की भूल हो गई है।

आर्यसमाजी संकुचित हृदय और झगड़ालू स्वभाव होने के कारण अन्य मतावलम्बियों के साथ, और जब उन्हें दूसरा कोई न मिले तो आपस में झगड़ा करते हैं।

('यंग इंडिया' अप्रैल सन् १९२४)

चौथी हार

सन् १९१७ में नैरोबी (अफ्रीका) में मूर्तिपूजा विषय पर एक जगत् प्रसिद्ध—विराट् शास्त्रार्थ हुआ था। सनातन धर्म की ओर से पं० माधवाचार्य शास्त्री और समाज की तर्फ से महाशय बालकृष्ण शर्मा (सभापति आर्य विद्वत्सम्मेलन, दयानन्द जन्म शताब्दी मथुरा, गवर्नर गुरुकुल आन्ध्र)—जो अपने जमाने के सबसे बड़े समाजी पंडित माने जाते थे, वादी-प्रतिवादी थे। शान्ति और सभ्यता पूर्वक शास्त्रार्थ समाप्त हुआ, जिसका निर्णय—आनरेबल मिस्टर अहमद हुसेन अहमदी [एम. एल. सी.] मेम्बर आभ लेजिस्लेटिव कौंसिल केनिया ने किया। यहाँ यह कहना अनुचित न होगा कि संसार में मुसलमानों से बढ़ कर मूर्तिपूजा का विरोधी दूसरा कोई संप्रदाय नहीं, उनमें भी कादियानी फिर्के के अहमदी लोग तो 'नींब चढ़े करेले का उदाहरण हैं' शायद यही समझ कर आर्यसमाज ने जनता के मध्यस्थ द्वारा मलिक साहिब को राय देने का अवसर दिया था, परन्तु सत्य में भी कुछ अलौकिक शक्ति होती है जिससे प्रेरित होकर मूर्तिपूजा के कट्टर शत्रु ने भी नीचे लिखा निर्णय दिया।

मिस्टर मलिक का निर्णय

मेरी सम्मति में सनातन धर्मी पण्डित ने शास्त्रार्थ में पूर्ण रीति से सिद्ध कर दिखाया कि न केवल वेद में ही बल्कि आर्यसमाज के मान्य ग्रन्थों में भी मूर्तिपूजा की शिक्षा मौजूद है।

आर्यसमाज की तरफ से जो दलाइल दी गई वे चाहे कितनी ही मजबूत क्यों न मान ली जावें उनसे ज्यादा से ज्यादा यही सिद्ध हो सकेगा कि मूर्तिपूजा बुद्धिग्राह्य नहीं, परन्तु इससे इस बात का समर्थन नहीं होता कि वेदों और आर्यसमाज की मान्य पुस्तकों में मूर्तिपूजा की तालीम नहीं।

इस शास्त्रार्थ में जहाँ तक मैं उपस्थित जनता—(जिसमें हर मजहबो मिल्लत के लोग शामिल थे)—के ख्यालात का अन्दाजा लगा सकता हूँ—यह मालूम होता है कि बहुसंख्यक जनों की यही धारणा थी कि आर्य पण्डित सनातनधर्मी पण्डित के मुकाबले में नाकामयाब रहा।

नैरोबी
२६-८२७ (ह० मलिक हमद अहमदी)

राजा शिवप्रसाद से लिखित शास्त्रार्थ में बुरी तरह पराजित हो जाने के बाद स्वामी दयानन्द ने फिर कभी न लिखित शास्त्रार्थ स्वीकार किया और ना ही

निर्णायक मध्यस्थ कभी माना । आज भी आर्यसमाजी उक्त दोनों नियम कभी स्वीकार नहीं करते, केवल वाचिक हो हल्ला मचाकर अनिर्णीत शास्त्रार्थ को बीच में ही लटकते रहने देना चाहते हैं। बस ! आर्यसमाज की पराजय के ये तीन अमोघ गुर सबको कण्ठस्थ कर लेने चाहिएँ कि (१) निर्णायक मध्यस्थ (२) संस्कृत में लेखबद्ध शास्त्रार्थ और (३) जनता को तत्काल हिन्दी शब्दानुवाद सुना देना ।

वह मरा पड़ा दयानन्दी पानीपत के मैदान में ।

आर्यसमाज की लज्जाजनक पराजय

दयानन्दी शास्त्रार्थी म० रुद्रदत्त आर्योपदेशक ने शास्त्रार्थ में पराजित होकर सनातन-धर्मी मंच से दश सहस्त्र जनता के सामने मूर्ति में भगवान् की सत्ता मञ्जूर की ।

दयानन्दी मंच पर दहाड़ते हुए शास्त्रार्थपंचानन श्री प्रेमाचार्य शास्त्री के आगे से ध्वनि-विस्तारक यन्त्र उठा लिया और असमय में ही अपनी सभा को समाप्त कर दिया ।

शास्त्रार्थ के लिए सदलबल दयानन्दी मञ्च पर शास्त्रार्थ महारथी पंडित माधवाचार्य शास्त्री के पहुंचने पर आर्यसमाज द्वारा जान बचाने का अन्य उपाय न देख कर पुलिस की शरण में गिड़गड़ाना, और मजिस्ट्रेट द्वारा १४४ धारा की घोषणा करवा कर स्वयं अपना मंच छोड़ भागना ।

मूर्तिपूजा को अवैदिक सिद्ध करने वाले को दस सहस्त्र रुपये का पुरस्कार तथा महारथी जी के पाँच प्रश्नों का उत्तर देने वाले को प्रत्येक पर एक-एक सहस्त्र रुपये का पुरस्कार ले सकने वाला दयानन्दी संसार में पैदा ही नहीं हुआ ।

शास्त्रार्थ की पृष्ठभूमि

समाचार पत्रों में आर्यसमाज की ओर से मुद्रित दयानन्द काशी शास्त्रार्थ शताब्दी' के उत्सव की सूचना और उसके प्रोग्राम में सनातन धर्मियों को 'मूर्तिपूजा विषय पर शास्त्रार्थ का आह्वान श्री सनातन धर्म दिग्विजय मण्डल दिल्ली की ओर से संस्कृत श्लोकबद्ध शास्त्रार्थ घोषणा (१) सार्वदेशक आर्य प्रतिनिधि सभा दिल्ली (२) मन्त्री उत्तर प्रदेशीय आर्य प्रतिनिधि सभा और (३) दयानन्द काशी शास्त्रार्थ

शताब्दी वाराणसी को तथा आर्यसमाज के प्रसिद्ध २ उपदेशकों को प्रमाण-पत्रित डाक द्वारा भेजी गई परन्तु तीनों संस्थाओं में से किसी का भी कोई उत्तर प्राप्त नहीं हुआ। उक्त घोषणा प्रामाणिक शास्त्रार्थ पृष्ठ १२ पर मुद्रित है।

उक्त घोषणा के साथ हमारे निजी पत्र

मन्त्री महाशय !

(१) सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा दिल्ली।

(२) आर्यसमाज वाराणसी।

(३) काशी शास्त्रार्थ शताब्दी समिति, लखनऊ।

सादर जय धर्म,

पत्र के साथ शास्त्रार्थ घोषणा परिपत्र संलग्न है तदनुसार कार्तिक शुक्ला नवमी से द्वादशी पर्यन्त मैं अपने सहयोगियों सहित शास्त्रार्थ के लिये काशी में उपस्थित रहूँगा। आप अपना लिखित आह्वान पत्र मुझे निम्नलिखित पते पर भेजें और जैसे हम अपने वेद सर्व शाखा सम्मेलनों में आर्यसमाजी विद्वानों का आवास भोजन मार्ग व्यय आदि द्वारा आतिथ्य करते हैं आप भी तथैव करेंगे।

किमाधिकम्

पता :—

प्रतिवादी

ब्रह्मकूट, डी० २५।१२ नारद घाट, वाराणसी। माधवाचार्य

दूरभाष २६४८

हम आर्यसमाज की घोषित तिथि २० नवम्बर सन् १९६९ को वाराणसी पहुंच गए। दुर्गा कुण्ड पर हमारा शास्त्रार्थ मञ्च लग गया परन्तु आर्यसमाज ने हमारी तैयारी देखकर अपनी तिथियों को स्थगित कर दिया। दो दिन तक पुरीपीठाधीश्वर सुमेरु पीठाधीश्वर शंकराचार्य स्वामी करपात्री जी महाराज और शास्त्रार्थ महारथी पं० माधवाचार्य शास्त्री दयानन्दियों को ललकारते रहे। वे सामने बैठे सुनते रहे परन्तु कोई सामने नहीं बोला। यह सब विवरण 'लोकालोक' के दिसम्बर के अंक में छप चुका है यह आर्यसमाज की प्रथम घोर पराजय हुई।

धूर्ततापूर्ण चालाकी

हमारे घोषणापत्र से दयानन्दियों को यह तो विदित हो ही गया था कि महारथी

२० नवम्बर को वनारस में रहेंगे। अतः उन्होंने खाली मैदान समझ कर दिल्ली झूठा प्रोपेगण्डा आरम्भ कर दिया कि कोई भी सनातन धर्मी शास्त्रार्थ करने आएँ! १९ नवम्बर का लिखा श्री बिहारी लाल शास्त्री अमर स्वामी परिव्राजक पोस्ट कार्ड एवं २० नवम्बर का लिखा आचार्य विश्वश्रवा व्यास का पत्र मिला समें लिखा था कि २० नवम्बर को शास्त्रार्थ करने आओ। भला इन मिथ्या तीस रखां वनने वाले तीनों महाशयों से कोई पूछे कि जब महारथी जी तुम्हें अपनी स्त्रार्थ घोषणा में तथा निजी पत्रों में २० नवम्बर को वाराणसी पहुँच जाने की चना दे चुके थे तब २० नवम्बर को दिल्ली में उनका आह्वान करना और वह ी ११ नवम्बर के पत्र के उत्तर में २० नवम्बर को ही उत्तर देना इसे सिवाय तंता पूर्ण चालाकी के और क्या कहा जा सकता है।]

दिल्ली में भी मुखमर्दन

दिल्ली के सुप्रसिद्ध समाज सेवी पं० रामेश्वराचार्य शास्त्री जो कि कुछ दिन र्वं तक तो आर्यसमाजियों और कथित सुधारकों के चक्रव्यूह में फंसे थे परन्तु इन ोगों का 'मनस्यन्यद् वचस्यन्यत् कमग्यण्यत्' प्रवृत्ति को देख कर ग्लान्त हो गए ो वे स्व० पं० अखिलानन्द की भाँति पुनः परम्परागत सत्य सनातन-धर्म की शरण आ गए। अभी २ काशी शास्त्रार्थ विजयमहोत्सव के मञ्च पर तो उन्होंने स्वयं ात्मकथा सुनाकर अपने पूर्व कृत्यों के प्रायश्चितार्थ सनातन-धर्म सेवा का दृढ़व्रत हण किया है। उन्होंने जब नगर में शास्त्रार्थ के विज्ञापन पढ़े तो वे दयानन्दियों ी मिथ्या हुंकार को सहन न कर सके।

यद्यपि उनकी माता के स्वर्गवास को अभी दश दिन ही हुए थे वे उनके ृतक श्राद्ध में व्यस्त थे। तथापि श्री पंडित दीनानाथ जी शास्त्री सारस्वत विद्या-ागीश सहित आर्यसमाज द्वारा घोषित समय पर ही शास्त्रार्थ मञ्च पर जा पहुँचे। स अचानक अनभ्रवज्र पात से दयानन्दी घबड़ा गए परन्तु अब क्या बनता था। ी रामेश्वराचार्य शास्त्री ने वेदादि शास्त्रों के प्रमाणों द्वारा मूर्तिपूजा को सिद्ध िया। उत्तर में संस्कृत ज्ञान शून्य अमर स्वामी परिव्राजक भूत पूर्व ठाकुर अमर सह जो कि कुंवर सुखलाल आर्य भजनोपदेशक की मण्डली में सरंगी बजाया करते चिल्लपों करने लगे। भला वेद शास्त्रों के प्रमाणों का वे क्या उत्तर दे सकते ी भरी जनता में आर्यसमाज की वह किरकिरी हुई कि जन्म भर याद रखेंगे। स प्रकार खाली मैदान देखकर मुफ्त में वाहवाही लूट लेने का दयानन्दियों का यह खा स्वप्न भी मिथ्या सिद्ध हुआ।

आर्य मित्र का सफेद झूठ

आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश के मुखपत्र 'आर्य मित्र' लखनऊ ने मिथ्या घोषणा की पराकाष्ठा कर डाली। उक्त पत्र ने अपने ३०-११-६९ अङ्क के मुख पृष्ठ पर मोटे टाइप में छापा कि—

काशी शास्त्रार्थ शताब्दी के उपलक्ष में २० नवम्बर ६९ को दिल्ली में भव्य समारोह शास्त्रार्थ के लिए पोस्टरों द्वारा विज्ञापन, लिखित पत्र द्वारा निमन्त्रण, परन्तु शास्त्रार्थ के लिए कोई भी सम्मुख नहीं आया, पौराणिक पण्डित दिल्ली से बाहर चले गये आर्यसमाज की विजय की सर्वत्र चर्चा।

एक शताब्दी के बाद पुनः मूर्तिपूजा की वैदिकता सिद्ध

पाठक विचार करें जब कि अन्यून दो घण्टे भरी सभा में शास्त्रार्थ हुआ तब पत्र का उपर्युक्त लिखा कितना बड़ा झूठ है।

इस पर भी तुक यह कि इसी पत्र ने अपने अगले अङ्क में उक्त शास्त्रार्थ का पूरा विवरण स्वयं छापा है कोई इस मिथ्याभासी से पूछे कि जब तुम्हारे शब्दों में शास्त्रार्थ हुआ ही नहीं था फिर यह अगले अंक में कहां से छप गया।

आर्यसमाजी संसद सदस्य भी झूठ बोलते हैं

आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तरप्रदेश के प्रधान श्री शिव कुमार शास्त्री संसद सदस्य के (तत्वाधान में) 'आर्य मित्र' आदि पत्रों में शताब्दी की रूप रेखा का चित्रण करते हुए प्रकाशित किया गया कि उक्त शताब्दी का समापन माननीय श्री गोपाल स्वरूप पाठक महोदय भारत के उपराष्ट्रपति करेंगे यह पढ़कर हमारी ओर से श्री पं० नन्दलाल शास्त्री मन्त्री अखिल भारतीय धर्म संघ ने मान्य उपराष्ट्रपति को पत्र लिखकर प्रार्थना की कि वे काशी आवें तो इन्हीं तिथियों में होने जा रहे सनातनधर्म विजय महोत्सव में भी पधारें उत्तर में उनके निजी सचिव का नीचे लिखा पत्र मिला जिससे दयानन्दियों के मिथ्या प्रलाप का भांडा फोड़ होता है।

अविकल प्रतिलिपि

सेक्ट्री टू दि वाइस प्रेजीडेण्ट आफ इण्डिया
नई दिल्ली ।
दिसम्बर १२—१२—१९६९

सील

प्रिय श्री शास्त्री जी,

आपका पत्र दिनाँक ८-१२-६९ का उपराष्ट्रपति जी के नाम प्राप्त हुआ धन्यवाद ।

इस समाचार में कि उपराष्ट्रपति जी वाराणसी में आर्यसमाज द्वारा चलाये गये शास्त्रार्थ विजय शताब्दी समारोह का समापन करने के लिये पधार रहे हैं, कुछ तथ्य नहीं है ।

शुभ कामनाओं सहित ।

आपका,
(वि० फड़के)

श्री नन्दलाल जी शर्मा, शास्त्री,
अखिल भारतीय धर्म संघ,
निगम बोध घाट, दिल्ली-६

आर्यसमाज में मूर्तिपूजा

—श्री स्वामी केशव पुरी जी महाराज (वाराणसी)—

भोग लगाना

स्वामी दयानन्दजी ने यों कहा कि 'जो कुछ' पाकशाला में भोजनार्थ सिद्ध हो उसका दिव्य गुणों के अर्थ उसी पाकाग्नि में निम्नलिखित मन्त्रों से विधिपूर्वक होम नित्य करे—ओं अग्नये स्वाहा, सोमाय स्वाहा ।' (विस्तार के भय से पूरा मंत्र न लिख कर हम दिग्दर्शन मात्र करा रहे हैं। दयानन्दजी ने आगे कहा—'इन प्रत्येक मन्त्रों से एक २ वार आहुति प्रज्वलित अग्नि में छोड़े पश्चात् थाली अथवा

१. 'सत्यार्थ प्रकाश' चतुर्थ समुल्लास, पृष्ठ ६३, ६४, (वैदिक यन्त्रालय, अजमेर प्रकाशन, २० वां संस्करण संवत् १९८५ वि०) ।

भूमि में पत्ता रख कर पूर्वदिशादि क्रमानुसार यथाक्रम इन मन्त्रों से भाग रक्खे।'

ओं सानुगायेन्द्राय नमः। सानुगाय यमाय नमः। सानुगाय वरुणाय नमः। सानुगाय सोमाय नमः। मरुद्भ्यो नमः। अद्भ्यो नमः। वनस्पतिभ्यो नमः। श्रियै नमः। भद्रकाल्यै नमः। ब्रह्मपतये नमः। वास्तुपतये नमः। विश्वेभ्यो देवेभ्यो नमः। भूतेभ्यो नमः। नक्तञ्चारिभ्यो भूतेभ्यो नमः। सर्वात्मभूतये नमः॥

स्वामीजी ने आगे कहा—

'इन भागों को जो कोई अतिथि हो तो उसको जिमा देवे अथवा अग्नि में छोड़ देवे।" (इसके आगे भी भोग लगाने का वर्णन है)।

पाठको! विचार करो! भोग (शरीर धारी) करता है या निराकार (बिना शरीर वाला)?

अच्छा थोड़ी देर के लिए मान लो कि निराकार भी भोग करता है। अब दूसरा विचार करो! नाम लिया—इन्द्र, वरुण, यम, सोम इत्यादि का और खिला दिया अतिथि को या अग्नि में डाल दिया तो इन्द्र, वरुण आदि तो भूखे ही रह गये। अगर आर्यसमाजी यह कहें कि इन्द्र, वरुण, यम आदि को मिलता है तो हम पूछते हैं कि सनातनधर्मी यदि अपने मरे हुए लोगों के नाम पर ब्राह्मणों को भोजन कराते हैं तो तुम उनको क्यों कोसते हो? तीसरी बात यह है कि 'भद्रकाल्यै नमः' जो ऊपर कहा, इस भद्रकाली का आर्यसमाज से क्या सम्बन्ध है? सनातन-धर्मियों की चोरी करना और उन्हीं को कोसना! उल्टा चोर कोतवाल को डांटे! चौथी बात यह है कि स्वामीजी ने अन्न के भाग रखने को तो लिखा लेकिन पानी पिलाने को नहीं लिखा। आतिथ्य की यह विधि दुनिया से निराली है। अगर यह कहो कि पानी पिलाना तो स्वतःसिद्ध है तो देखिये! संसार में ऐसे भी तो लोग हैं जो कि दूसरे की बुद्धि से ही चलते हैं वे तो तपाक से बोल पड़ेंगे कि यह तो गुरु जी ने लिखा नहीं तो हम कैसे करें! तब तो वह देवता या अतिथि प्यासा ही मर जायगा! धोखा! भयंकर धोखा!!

छुरे से प्रार्थना

स्वामी दयानन्दजी ने यों कहा कि नाई के छुरे (उस्तरे) से प्रार्थना करो।

दयानन्द जी की रचित 'संस्कार* विधि के चौल प्रकरण में लिखा है—

"ओं विष्णोर्दंष्ट्रोऽसि" इस मन्त्र से छुरे की ओर देखकर (दयानन्द जी ने इसका अर्थ नहीं लिखा है) इसका अर्थ है—हे छुरे! तू विष्णु की दाढ़ है। आर्य-समाज के 'संस्कार प्रकाश' में इसका अर्थ लिखा है—हे उस्तरे तू विष्णु (परमात्मा) की दाढ़ है।'

आगे इस प्रकार लिखा है—

ओं शिवो नामासि स्वधितिस्ते पिता नमस्ते मा मा हिंसीः ॥

यजु० ३।६३।

हे उस्तरे! तू कल्याणकारी है और अच्छे लोहे का बना हुआ है, तुझे नमस्कार हो, तू इस बालक को हानि मत पहुंचाना। इसके आगे लिखा है—

ओं स्वधिते मैनं हिंसीः ॥ यजु० ४।१।

हे तेजधार वाले छुरे! इस बच्चे को मत मार।

विवेकी पाठको! आर्यसमाजियों का परमात्मा या ईश्वर निराकार है। ऊपर आपने पढ़ा है—"ओं विष्णोर्दंष्ट्रोऽसि" भला बताइये! निराकार की दाढ़ कैसी? आप जानते हैं कि हवा निराकार है। क्या आपने कभी उसकी दाढ़ देखी है? अगर देखी हो तो कृपा कर मुझे भी बताने का कष्ट करें कि कितने इंच और कितने सैण्टीमीटर लम्बी, चौड़ी और मोटी होती है!

और देखिये! हम सनातनधर्मी लोग लोहा-लक्कड़, कंकड़-पत्थर को भगवान् मान कर पूजते हैं, भोग लगाते हैं प्रार्थना करते हैं तो ये आर्यसमाजी भी तो जड़ (अचेतन) वस्तु की पूजा करते हैं। लकड़ी के पटेले की पूजा विधिवत् करने को दयानन्द जी ने कहा है। इसलिए मानना पड़ेगा कि आर्यसमाजी मूर्तिपूजक हैं। तब इनसे पूछिये कि सनातनियों को पूजा करते देख कर इनके पेट में शूल क्यों उठते हैं? हम सनातनी आर्यसमाजियों की जैसी मूर्खता कभी नहीं करते। हम तो अणु-अणु में रहने वाले परमात्मा की मूर्ति की कल्पना सब से पहले हृदय में करते हैं, फिर उससे प्रार्थना करते हैं कि यहाँ आओ, इस मूर्ति में बैठो, बैठकर स्थिर हो जाओ। विचार कीजिये कि हम पत्थर को पूजते हैं या भगवान् को। सनातनियों का अनुकरण करना और उन्हीं को गाली देना, जिस पत्तल में खाना उसी में छेद करना!

---

* "आर्यसमाज में मूर्तिपूजा" लेखक—स्वर्गीय पं० कालूराम शास्त्री।

जूते से प्रार्थना

स्वामी दयानन्द जी ने यों कहा कि, जूते* से प्रार्थना करो। "संस्कार विधि" के समावर्तन प्रकरण में स्वामी दयानन्द जी ने लिखा है—

ओं प्रतिष्ठेस्थो विश्वतो मा पातम् ॥

—पारस्कर कां० २ कं० ६

इस मन्त्र से जूते से प्रार्थना करे—

"हे जूता ! तुम शरीर के आधार हो, सब भूतल पर मेरे पाँवों की रक्षा करो।"

पाठको ! किसी गडरिया, घसियारा, या मेहतर को यह उपदेश सुनाना लेकिन ध्यान रहे, दूर से बात करना ताकि अगर कहीं वह जूता फेंक कर मारे तो आप को लगे नहीं। स्वामी दयानन्द जी बुद्धि का दिवाला निकल गया।

---

* "आर्यसमाज में मूर्ति पूजा" ले० पं० कालूराम शास्त्री।

स्वामी विवेकानन्द और मूर्तिपूजा

—श्री शिवकुमार गोयल 'पत्रकार'

स्वामी विवेकानन्द जी उन महापुरुषों में से थे जिन्होंने विदेशो में हिन्दूधर्म व हिन्दू संस्कृति का डंका बजाया था। भौतिकवाद की चकाचौंध में फंसे पाश्चात्य देशों को उन्होंने आध्यात्मिकता व हिन्दुत्व का अमर सन्देश देकर यह सिद्ध किया था कि सच्ची सुख शांति भारत और सनातन-धर्म से ही मिल सकती है।

मूर्तिपूजा

स्वामी विवेकानन्द जो को घोर नास्तिक से आस्तिक बनाने वाले स्वामा रामकृष्ण परमहंस को साक्षात् मां काली के दर्शन हुआ करते थे। श्री परमहंस ने विज्ञान के छात्र नरेन्द्र को किसी तर्क से नहीं अपितु अपनी दिव्य शक्ति व चमत्कार से ही नास्तिक से आस्तिक बनाया था।

एक दिन जब किसी ने स्वामी विवेकानन्द जी से मूर्तिपूजा के विषय में प्रश्न किया तो उन्होंने तड़ाक से उत्तर दिया--

"मेरे गुरुदेव स्वामी रामकृष्ण परमहंस ने केवल मूर्तिपूजा से ही सब कुछ प्राप्त किया है। अतः मूर्तिपूजा की महत्ता मैं कहां तक प्रगट करूं।

चित्र पर थूक दो

बात अलवर रियासत की है। स्वामी विवेकानन्द जी अलवर के महाराज श्री मंगल सिंह जी के अतिथि थे। उन दिनों मूर्ति पूजा के विरुद्ध धूंवांधार प्रचार के कारण लोगों की आस्था डावांडोल होने लगी थी। महाराजा मंगलसिंह जी ने मूर्तिपूजा के प्रति अनास्था प्रगट की तो स्वामी जी गम्भीर हो गये। इसी बीच उनकी दृष्टि दोवार पर टंगे महाराजा के विशाल चित्र पर पड़ी। स्वामी जी ने चित्र को पास से देखना चाहा। चित्र उनके पास रखदिया गया। एकाएक उन्होंने पास बैठे रियासत के दीवान से कहा कि 'दीवान जी! इस मूर्ति पर थूक दीजिए"। दीवान व अन्य उपस्थित लोग यह सुनकर स्तंभित रह गये। स्वामी जी ने कहा कि "यह

केवल कागज का टुकड़ा मात्र ही तो है, इसमें महाराजा कहां हैं ? अतः इस पर थूकने में क्या आपत्ति हो सकती है ?"

तेजस्वी सन्यासी के उपरोक्त शब्द सुनते ही दीवान बोला—'स्वामी जी महाराज, यह हमारे महाराजा का चित्र है अतः हम उसका अपमान कैसे कर सकते हैं ?"

इस पर स्वामी जी ने कहा कि "यह तो कागज का चित्र ही तो है' इस में महाराजा का शरीर उपस्थित थोड़े ही है।" इसके बाद उन्होंने महाराजा की ओर संकेत करके कहा 'देखो राजन्, जिस प्रकार दीवान जी को इस कागज के चित्र में आपकी छवि के दर्शन हो रहे हैं उसी प्रकार जो व्यक्ति अपने समक्ष अपने इष्टदेव की मूर्ति स्थापित कर उसकी पूजा करते हैं, वे उस धातु या पत्थर की नहीं, वरन उसमें ईश्वर के रूप की पूजा करते हैं। यह उत्तर सुनकर महाराजा स्वामी जी के चरणों में गिर गये।

संकीर्तन

एक बार स्वामी जी जयपुर में थे। वे सड़क पर से गुजर रहे थे कि उन्होंने देखा कि सड़क पर संकीर्तन करते हुए जुलूस निकाला जा रहा है। साथ चल रहे एक व्यक्ति नें कहा कि "हिन्दू जाति को कैसे रोग लग गये हैं, यह पागल व्यर्थ ही गला फाड़ रहे हैं ?" यह सुनते ही स्वामी जी का मुख क्रोध से तमतमा गया। वे बोले—"भगवान् राम कृष्ण ही तो हिन्दू जाति के प्राण हैं। उनकी दिव्य लीला व नाम संकीर्तन से ही तो मनुष्य का कल्याण संभव है।"

—o—

बीसवीं शताब्दी में बने विशिष्ट देव स्थान

यूं तो भारत के कोने २ में प्रतिष्ठित करोड़ों मन्दिर विद्यमान हैं। दक्षिण भारत के मन्दिरों को देखने पर ऐसा अनुभव होता है कि मानो यह मानव निर्मित स्थान नहीं है अपितु विश्वकर्मा ने ही इन्हें बनाया है। रामेश्वर की आधा मील घेरे में घिरी परिक्रमा और समुद्र जल से निकाले सीपी जैसे पत्थरों की चट्टानों के द्वारा निर्मित सहस्त्रों स्तम्भ दर्शक को चकित कर देते है, रंगनाथ धाम की सात परिक्रमाएं स्वर्ण जटित मन्दिर शिखर और गरुड़ स्तम्भ कम चमत्कार पूर्ण नहीं है। हम भुवनेश्वरम् और खजुराहो के भग्नावशेषों की चर्चा नहीं करते उनकी महिमा तो

सभी विश्व के पर्यटक गाते हैं परन्तु दयानन्द के काशीशास्त्रार्थ के बाद केवल एक शताब्दी में जो मन्दिर बने हैं उनकी संख्या भी लाखों को पार कर रही है। वस्तुतः शास्त्रार्थ में दयानन्द जी के पराजित हो जाने पर मूर्तिपूजा का सिद्धान्त नये रूप में चमक उठा। आस्तिकों ने दिल खोलकर धड़ाधड़ नये मन्दिर बना डाले। हम बड़े बड़े नगरों में बने केवल उन्हीं मन्दिरों का यहां उल्लेख करते हैं जिन पर कि दस लाख रुपये से अधिक व्यय उस समय हुआ है जब कि गेहूं का भाव प्रति रुपया छब्बीस सेर था और घृत प्रति रुपया डेढ़ सेर का बिकता था। आज तो उनकी लागत का मूल्य करोड़ों रुपये आंका जा सकता है।

अकेले दिल्ली नगर में ही शताधिक मन्दिर बने हैं। आपा गङ्गाधर का शिवालय जिस का नाम अब गौरी शंकर मन्दिर प्रसिद्ध है। नई दिल्ली का लक्ष्मी नारायण मन्दिर जो बिरला मन्दिर नाम से प्रख्यात है। दरियागंज स० ध० सभा का मन्दिर, पटेल नगर का लाल मन्दिर, नई दिल्ली का हनुमान मन्दिर जहां प्रति मङ्गलवार को मेला भरता हैं।

कलकत्ता डीडवाना और पुष्कर के दिव्यदेश जो श्री मगनीराम राम कुमार बांगड़ फर्म द्वारा निर्मित हुये है।

बम्बई का फनसवाड़ी वाला दिव्यदेश। माधव बाग का प्रसिद्ध मन्दिर साधु बेला वालों का विशाल मन्दिर आदि।

कानपुर का कमलापत सिंहानिया का दिव्य मन्दिर। मोदीनगर का मोदी परिवार का दिव्य मन्दिर जिसके एक कोने में बैठी स्वामी दयानन्द की प्रस्तर मूर्ति भी भगवान् की उपासना में संलग्न है।

जम्मू नगर तो मन्दिरों का ही नगर है जहां बारह लक्ष शालग्राम और ग्यारह लक्ष शिवलिंग विद्यमान हैं।

श्री बिरलाजी द्वारा लन्दन नगर में, पटना में मथुरा में कुरुक्षेत्र में और काशी में विशाल मन्दिरों का निर्माण हुआ है।

अमृतसर का स्वर्ण मन्दिर पचास वर्ष पूर्व शिवमन्दिर था अब भी उसका नाम 'हर मन्दिर' ही प्रसिद्ध है।

अंग्रेजों की कूटनीति ने अकाली पार्टी को उत्पन्न करके हिन्दुओं से पृथक किया और विशेषाधिकार के विष बीज का वपन कर दिया था तो रातोंरात, शिवालय साफ कर दिया गया तब दुर्ग्याना नाम का प्रसिद्ध मन्दिर महामना मालवीय द्वारा प्रतिष्ठापित हुवा, जहां नित्य मेला भरा रहता,

है। अमृतसर के स्वर्ण मन्दिर पर और काशी विश्वनाथ मन्दिर पर सोने का पत्र पंजाब के सिक्खराजा रणजीतसिंह ने लग वाया था। स्वामी नारदानन्द जी द्वारा और स्वामी शुकदेवानन्द भजनानन्द जो द्वारा प्रतिष्ठापित मन्दिर अनेक हैं सभी दर्शनीय हैं। स्व० गोस्वामी गणेशदत्त जी के प्रचार काल में यत्रतत्र सर्वत्र कई सौ बड़े २ मन्दिरों का निर्माण हुआ है।

हैदराबाद दक्षिण में सीताराम बाग के मन्दिर को वहां के मुस्लिम बादशाह द्वारा दी गई जागीर के दो ग्राम विद्यमान् है जिनकी वार्षिक आय अन्यून तीन लाख रु० की लागत से एक विशाल दिव्य मन्दिर बनवाया है।

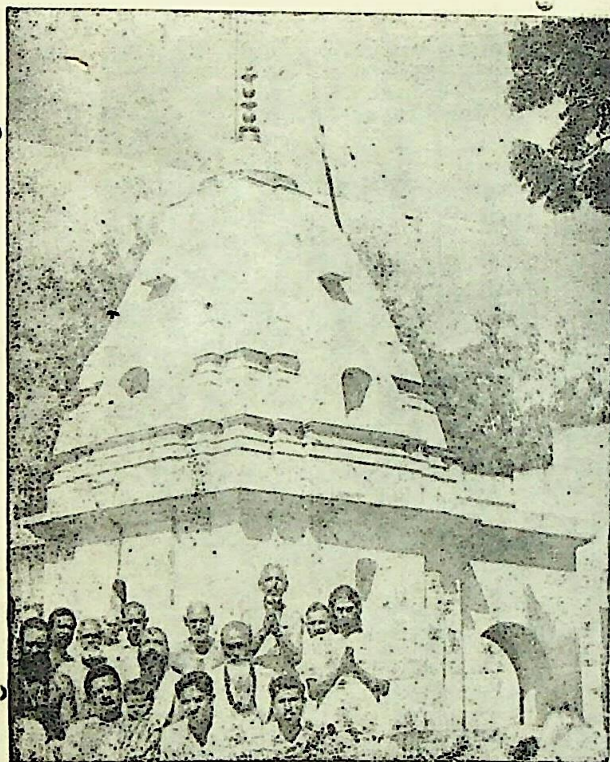
काशी अयोध्या वृन्दावन आदि तीर्थ धामों का तो कथन ही क्या करना वे तो मूर्तिपूजा के गढ़ हैं जिनके दर्शनों की इच्छा का संवरण आर्य समाजी भी नहीं कर पाते। चुपके २ दर्शन करके कृतार्थ होते हैं। अभी २ काशी शास्त्रार्थ शताब्दी में जाने वाले जो आर्यसमाजी बसों द्वारा दिल्ली से गये थे वे सब अयोध्या प्रयाग आदि तीर्थों की यात्रा करते २ ही गये और सब देव मन्दिरों के दर्शन करके कृतार्थ हुये।

आसाम में प्रत्येक नगर में नई ठाकुर बाड़ियें बनी हैं। तिनसुखिया का शिवधाम तो बड़ा ही दर्शनीय है। रामपुर रियासत में मुस्लिम शासन के समय शिखर वाले मन्दिर बनाने की आज्ञा नहीं थी परन्तु रियासत के भारत संघर्ष में विलीन होते ही वहां नगर २ और ग्राम २ में बीस वर्ष के अन्दर अनेक मन्दिर बन गये हैं।

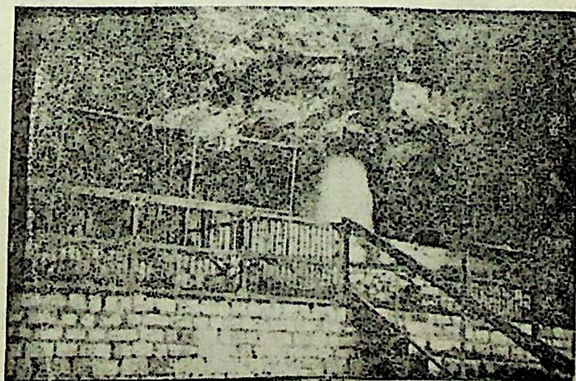
पाकिस्तान बन जाने पर पश्चिमी पंजाब से जो सनातन धर्मी इधर आकर बसे उन्होंने नगर और ग्राम २ में नए मन्दिरों को जाल-सा बिछा दिया है जहां प्रतिदिन कथा कीर्तन और उत्सव मनाये जाते हैं।

करोड़ों रुपए की लागत से जैनों के तथा बौद्धो के मन्दिर बने हैं, गांधी जी की प्रतिमाएं अन्यान्य विशिष्ट नेताओं की प्रतिमाएं तो प्रायः सभी बड़े छोटे नगरों में बनती जा रही हैं।

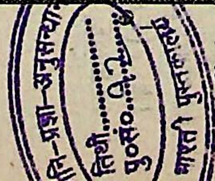
कहावत प्रसिद्ध है कि—'श्वान भंकत रहे हाथी अपनी मस्त चाल से चलता रहा' ठीक इसी प्रकार स्वामी दयानन्द और उनके क्रयक्रीत आर्योपदेशक चिल्लपों करते रहे। नये २ विशाल देव मन्दिरों के निर्माण का प्रवाह अपनी द्रुत गति से पूर्ववत् बल्कि पूर्व से भी कुछ अधिक निरन्तर आगे बढ़ता ही रहा। यदि दयानन्दी एक शती का आत्म निरीक्षण करें तो उनको अपनी बकवास का मूल्यांकन करके मारे शर्म के चुल्लू भर पानी में डूब कर आत्महत्या कर लेनी चाहिये।



पिलखुवा (मेरठ) का प्रसिद्ध शिवालय जहां संवत् १९१४ के स्वतंत्रता अभियान में अनेक शिव भक्त अंग्रेजों की संगीनों के लक्ष्य बने थे।



श्री अमरनाथ सुदूर काश्मीर प्रदेश की अधित्यका की प्राकृतिक गुफा में बर्फ से बनने वाला स्वयम्भू शिवलिङ्ग, जिसके दर्शनार्थ प्रति वर्ष सहस्रों श्रद्धालु जाते हैं।



सप्तस्रोत-(हरिद्वार) में निर्मित दर्शनीय सप्तर्षिमन्दिर

प्रसिद्ध साहित्यकार व निष्पक्ष आलोचक

भारतेन्दु हरिश्चन्द्र की दृष्टि में दयानन्द

अब दयानन्द नामी क्या जाने कौन जाति किस आश्रम के नग्न पुरुष सब देशों में भ्रमण करते हुए सनातनधर्म रूपी सूर्य को राहु की भांति ग्रास करते हुए मूर्खों और आलस्य से भरे हुए जीवों के हृदय वस्त्र को अपने रंगों में रंगते हुए, इसी बहाने से अपना नाम लोगों में विदित करते हुए और अपने वाक्य वान के आडम्बर से साधु लोगों का हृदय दहन करते हुए काशी आए ।

(हरिश्चन्द्र जी दूषणमालिका नामक अपनी पुस्तक की भूमिका के प्रथम पृष्ट पर लिखते हैं ।)

काशी सन् १८७०

स्वामी दयानन्द की पराजय का प्रबल प्रमाण

वि. सं. १९२६ की कार्तिक शुक्ला त्रयोदशी को काशी में आर्यसमाज के प्रवर्तक स्वामी दयानन्द सरस्वती जी महाराज तथा काशी के पण्डितों के बीच मूर्तिपूजा पर शास्त्रार्थ हुआ था। दंडी स्वामी विशुद्धानन्द सरस्वती जी महाराज भी उनमें सम्मिलित थे। काशी नरेश ने ,उसकी अध्यक्षता की थी। शास्त्रार्थ दुर्गाकुंड पर स्थित आनन्दबाग में हुआ जिसमें स्वामी दयानन्द जी पराजित हुये थे। वह आनन्द बाग आज भी विद्यमान है और शास्त्रार्थ का स्मारक भी उसमें बनाया गया है। स्मारक एक चौकोर वेदी के रूप में १७ × १७ फुट लगभग परिमाण का है। उस पर बैठने के लिए चारों ओर सीमेंट की बैठकें बेंच के आकार की बनी हुई हैं। बाग के पश्चिमोत्तर कोण में यह स्मारक है जिस पर एक शिलालेख है जो इस प्रकार है—



॥ ओ३म् ॥

शास्त्र द्वन्द्वांक चन्द्रेऽब्दे, वैक्रमे कार्तिके सिते ।
भौमे भास्वत्तिथौ दिव्य मूर्तिपूजा विनिर्णये ॥१॥
अमेठ्यानन्दबागेऽस्मिन्, काशिराज सभापतौ ।
जनौघे विपुले वादः, प्रवृत्तःश्रुतितत्परः ॥२॥
विशुद्धानन्द सुप्रज्ञै र्बालशास्त्र्यादिभिर्बुधैः ।
शास्त्रार्थमकरोत् साकं, दयानन्दो यतिर्महान् ॥३॥
भगवान्बख्श भूपालवचनात्तत्सुतः सुधीः ।
अलेखयच्छिलालेखं दानी राजा रणञ्जयः ॥४॥

आगे इस प्रकार लिखा है—

आर्य समाज के प्रवर्तक महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती से काशी के प्रमुख विद्वान् श्री बाल शास्त्री, तर्करत्न श्री अम्बिकादत्त व्यास, श्री दामोदर शास्त्री, श्री तात्या शास्त्री, श्री शिवसहाय राम, और श्री माधवाचार्य प्रभृति से आनन्द बाग में कार्तिक शुक्ला द्वादशी सं० १९२६ को जो अपूर्व शास्त्रार्थ हुआ था उसी की स्मृति में अमेठी नरेश राजर्षि महाराज भगवान् बख्शसिंह के सुपुत्र राजा रणञ्जय सिंह ने काशी शात्रार्थ वेदी का निर्माण कराया है तथा तपोमूर्ति महात्मा धानन्द स्वामी सरस्वती ने चैत्र शुक्ला एकादशी सं० २०२४ वि० को स्मृति पट्टा का उद्घाटन किया है ।

यहाँ पर प्रश्न यह उठता है कि शिलालेख में जय पराजय का उल्लेख क्यों नहीं किया गया ? इससे सिद्ध होता है कि स्वामी दयानन्द जी का पराजय हुआ था।

...o0o...